Chap-3

तृतीय अध्याय :

पुष्टिमार्गीय कीर्तन साहित्य : प्रारम्भ और विस्तार

१. भारतीय संगीत :-

१. संगीत की भूमिका ::

संगीत किसे मोहित नहीं करता? विद्वानों ने संगीत का मूल सामवेद से माना है, संगीत का इतिहास उतना ही पुराना है जितना वेदों का। संगीत विश्व व्यापी है, अनादि है। अन्तर से निकला संगीत जड़-चेतन सभी पर समान प्रभाव डालता है। श्रीमद् भागवत में कहा गया है।

'नधस्तदा तदुपधार्य मुकुन्दगीत-मावर्त लक्षित मनोभव भग्नवेगाः।
आलिङ्गान स्थगितमूर्मि भुजैर्मुरारे गृहन्ति पादयुगलं कमलो पहाराः ।।'[१]

अर्थात् अरी सखी ! देवताओं, गौ और पक्षियों की बात क्यों करती हो? वे तो चेतन हैं। इन जड़ नदियों को नहीं देखती? इनमें जो भँवर दीख रहे हैं, उनसे इनके हृदय में श्याम सुन्दर से मिलने की तीव्र आकांक्षां का पता चलता है! उसके वेग से ही तो इनका प्रवाह रुक गया है। इन्होंने भी प्रेम स्वरूप श्रीकृष्ण की वंशीध्वनि सुन ली है। देखो, देखो ! ये अपनी तरंगों के हाथों से उनके चरण पकड़कर कमल के फूलों का उपहार चढ़ा रही हैं और उनका आलिंगन कर रही हैं, मानों उनके चरणों पर अपना हृदय ही निछावर कर रही हैं।

विद्वानों ने संगीत के आदि प्रेरक के रूप में शिव और सरस्वती को माना है। अतः संगीत कला को प्राप्त करना देव कृपा के बिना सम्भव नहीं है। अतः संगीत दैवी विद्या है। कहते हैं संगीत का प्रयोग गंधर्वो द्वारा होता है, इसलिए इसे 'गंधर्व विद्या' भी कहा गया है।

२. संगीत की परिभाषाएँ ::

गीत में सम् उपसर्ग लगाने से संगीत बनता है जिसका अर्थ है सम्यक गान। इस प्रकार इसमें (संगीत में) गीत, वाद्य और नृत्य तीनों का समावेश है।[२]

संगीत शब्द से भारतीय संगीत में गायन, वादन तथा नर्तन तीन कलाओं का बोध होता है। इन तीनों के सम्मिलित रूप को संगीत कहते हैं अथवा संगीत के ये तीनों अंग माने गए हैं[३]

'गीत वाद्य तथा नृत्यं त्रय संगीतमुच्यते।'

'गीत वाद्य नर्तन च त्रय संगीतमुच्यते।'

'गीत वादित्र नृत्यानां त्रय संगीतमुच्यते।'

श्री भातखण्डे जी का कथन है 'संगीत समुदाय वाचक नाम है। इस नाम से तीन कलाओं का बोध होता है। ये कलाएँ गीत, वाद्य एवं नृत्य हैं। इन तीनों कलाओं में गीत का प्राधान्य है। अतः केवल संगीत नाम ही चुन लिया गया है।'[४]

लैडन ने कहा है 'संगीत तो विश्व भाषा है। जहाँ वाणी मूक हो जाती है, वहाँ संगीत फूट पड़ता है। संगीत हमारी भाषाओं की नैसर्गिक अभिव्यक्ति का माध्यम है। शब्दों में जिनकी प्रखरता और गहराई समा नहीं सकती हमारी ऐसी अनुभूतियों को संगीत स्वरों का रूप देता है।'[५]

सृष्टि के कण–कण में संगीत व्याप्त है। पक्षियों का कलरव, पानी का छम–छम बरसना, मेघों का गरजना, पत्तों की मर्मर ध्वनि, आँधी का हाहाकार, समुद्र–गर्ज़न, विशाल आकाश के तारों की जगमगाहट आदि प्रकृति के प्रत्येक कण में संगीत निहित है। नारद संहिता में कहा गया है कि–'चिडियाँ, भौंरे, पतंगे, हरिण आदि सभी जीव गाते हैं, अतः संगीत सर्व दिशाओं में व्याप्त है।'[६] संगीत इतना मोहक और मादक होता है कि वो देश, काल, जाति, भाषा, संस्कृति, धर्म आदि किसी की भी सीमाओं, बाधाओं व मर्यादाओं को स्वीकार नहीं करता।

रोम्यारोलाँ ने कहा है–'उच्चत्तम संगीत का प्रभाव देश, काल और व्यक्ति तक सीमित नहीं है। यह सबको अपने अक्षय भण्डार से कुछ न कुछ अवश्य देता

है।'[७] कहते हैं संगीत एक जीवित जादू है, तभी तो बीन के स्वर पर काला जहरीला साँप भी अपना स्वभाव भूल कर नाचने लगता है।

संगीत में गायन कला का सम्बन्ध नाभि एवं कण्ठ से है, वादन का उसकी तन्त्रकारी से और नृत्य का शरीर की मुद्रण कला से। स्वभाव सिद्ध और निरावलम्ब होने कें कारण कंठ–संगीत को पूर्ण तथा सर्वप्रधान और यंत्र संगीत तथा नृत्य को वाद्य–यंत्रों की आधीनता से सम्पादित होने के कारण मध्यम माना गया है। अतः संगीत में गाने की क्रिया को सबसे अधिक महत्व दिया जाता है तत्पश्चात् वादन और नृत्य को।[८]

३. संगीत के आधार ::

नाद – संगीत का आधार नाद है। शास्त्रों में नाद को ब्रह्म कहा है–'नादो ब्रह्म न संशयः।'[९] नाद का आदि स्थान भगवान् शिव का डमरू और उसका अस्तित्व वेद से भी पूर्व का माना गया है।[१०] संगीत रत्नाकर ग्रंथ के स्वर प्रकरण के प्रारम्भ में ही कहा गया है–

'चैतन्य सर्वभूतानां विवृत जगदात्मना।
नादब्रह्म तदानंदम द्वितीयमुपास्महम्।।'[११]

अर्थात् जो प्राणी मात्र का चैतन्य है और जो जगत के रूप में विकसित हुआ है, जो आनंदमय और अद्वितीय है, उस नाद ब्रह्म की हम उपासना करते हैं। नाभि के ऊपर हृदयस्थान से ब्रह्मरूध्र स्थित प्राणवायु में एक प्रकार का शब्द होता है, उसी को नाद कहते हैं–.

'नाभेरुर्ध्व हृदिस्थानान्मारुतः प्राणसंज्ञकः।
नदति ब्रह्मरूध्रान्ते तेन नादः प्रकीर्तितः।।'[१२]

गीत गान नाद पर आधारित है, नाद को कण्ठ से या वाद्य यंत्रों से प्रकट करते हैं। नृत्य भी गान और वाद्य पर आधारित है। अर्थात् गीत, वाद्य तथा नृत्य ये तीनों कलाएँ नादाधीन हैं–

'गीतं नादात्मकं वाद्य नादव्यक्तया प्रशस्यते।

तद्वयानुगतं नृत्यं नादाधीनमतस्त्रयम्।।'[13]

नाद के दो प्रकार हैं – अनाहत तथा आहत।[14] नादब्रह्म की उपासना से ब्रह्मा, विष्णु और महेश्वर की उपासना आप हो जाती है, क्योंकि ये नाद से भिन्न नहीं हैं।

'नादोपासनया देवा ब्रह्म विष्णु महेश्वराः।

भवन्त्युपासिता नूनं यस्मादिते तदात्मकाः।।'[15]

नाद अर्थात् वह ध्वनि जो सुनने में प्रिय लगे उसे संगीतोपयोगी नाद कहा जाता है।

श्रुति – 'श्रु' धातु जो सुनने के अर्थ में है उसमें 'ति' प्रत्यय लगाने से श्रुति शब्द बनता है। श्रुति अर्थात् जो कान से सुनाई दे तथा जिसको श्रवणोन्द्रिय या कान का परदा ग्रहण कर सके या पकड़ सके, उसे श्रुति कहते हैं। वह ध्वनि, जो गीत में प्रयोग की जा सके और जो एक्–दूसरे से अलग तथा स्पष्ट पहचानी जा सके, उसे श्रुति कहते हैं। श्रुति की परिभाषा समझने के लिए तीन बातों का ध्यान रखना अनिवार्य है – (अ) आवाज संगीतोपयोगी हो, (ब) ध्वनि साफ़–साफ़ सुनाई दे और (क) ध्वनि एक्–दूसरे से अलग तथा स्पष्ट पहचानी जा सके। अतः श्रुति की परिभाषा इस प्रकार होगी–'वह संगीतोपयोगी ध्वनि जो कानों को साफ सुनाई दे और जो एक दूसरे से अलग तथा स्पष्ट पहचानी जा सके, उसे श्रुति कहते हैं। श्रुतियाँ बाईस मानी गई हैं।'[16]

स्वर – जो नाद श्रुति उत्पन्न होने के पश्चात् तुरन्त निकलता है जो सुनने में रंजक और मधुर लगता है उसे स्वर कहते हैं। स्वर सात प्रकार के होते हैं– सा, रे, ग, म, प, ध और नि अर्थात् षडज्, ऋषभ, गान्धार, मध्यम, पंचम, धैवत और निषाद। संगीत दर्पणकार के मतानुसार मोर षडज का, चातक ऋषभ का, बकरा गांधार का, कौंच मध्यम का, कोकिला पंचम का, मेढ़क धैवत का और हाथी निषाद का – इस क्रम से सप्त स्वरों का उच्चारण करते हैं।[17]

ग्राम – स्वरों के समुदाय को ग्राम कहते हैं। ग्राम मूर्च्छना के आधारभूत होते हैं

'ग्रामः स्वर समूहः स्यान्मूटर्छनादेः समाश्रयः।'[18]

ग्राम तीन होते हैं – षडज्, मध्यम तथा गांधार

'षड्जमध्यमगांधार संज्ञाभिस्ते समन्वितः।'[१९]

मूर्च्छना – सात स्वरों के क्रमान्वित आरोहण–अवरोहण को मूर्च्छना कहते हैं। मूर्च्छना ग्राम के आश्रित होती है। ग्राम को नीचे से ऊपर और ऊपर से नीचे तक बजाना ही मूर्च्छना कहलाता है।[२०] तीन ग्राम होते हैं और प्रत्येक में सात–सात मूर्च्छनाएँ होती हैं।

तान – रागों के स्वल्प को तानने, विस्तृत करने तथा फैलाने को तान कहते हैं। तान दो प्रकार की होती है – शुद्ध तान और कूटतान।[२१]

सप्तक – सात स्वरों के क्रमिक समूह (सा, रे, ग, म, प, ध, नि) को भारतीय संगीत में सप्तक कहते हैं। भारतीय संगीत में सप्तक के तीन प्रकार माने जाते हैं – मन्द्र सप्तक, मध्य सप्तक और तार सप्तक।[२२]

वर्ण – स्वरों को यथानियम उच्चारण अथवा विस्तार करने तथा गान क्रिया को वर्ण कहते हैं। गायन में आवाज को स्वरों के कारण जो चाल मिलती है उसको गान क्रिया अथवा वर्ण कहते हैं। यह गान क्रिया अथवा वर्ण चार प्रकार के हैं – स्थायी, आरोही, अवरोही और संचारी।[२३]

अलंकार – नियमित वर्ण समुदाय को अलंकार कहते हैं।[२४]

पकड़ – जिस स्वर समुदाय से किसी राग का बोध होता है उसे पकड़ कहते हैं।[२५]

जाति – स्वरों के नाम वाली सात शुद्ध जातियाँ होती हैं–षडजा, ऋषभी, गान्धारी, मध्यमा, पंचमी, धैवती और नैषादी।[२६]

मेल या ठाट – किसी भी प्रकार के स्वरों का एक समूह मेल (ठाट) कहलाता है। मेल राग को प्रकट करने की शक्ति रखता है –

'मेल स्वरसमूहः स्याद्राग व्यञ्जनशक्तिमान।'[२७]

राग – राग शब्द की उत्पति रज् धातु से हुई है जिसका अर्थ है प्रसन्न करना। वह ध्वनि जो स्वर और वर्ण द्वारा शोभित हो और जिसमें रंजकता हो उसे राग कहते हैं–

'स्ववर्ण विशेषेण ध्वनिभेदेन वा पुनः।

रंञ्यते येन चः कश्चित् स रागः संमत्: सताम्।।'[२८]

संगीत रत्नाकर में राग की परिभाषा इस प्रकार की गई है–

'योडसौ ध्वनिविशेषस्तु स्वरवर्ण विभूषितः।

रंजको जन चित्तानां स रागः कथितो वुधैः।।' [२९]

अर्थात् ध्वनि की वह विशिष्ट रचना जिसे स्वर तथा वर्ण द्वारा सौंदर्य प्राप्त हुआ हो और जो सुनने वालों के चित्त को प्रसन्न करे उसे राग कहते हैं। संगीत पारिजात में कहा गया है –

'रंजकः स्वरसन्दर्भो राग इत्यभिधीयते।'[३०]

अर्थात् स्वरों का एक रंजक–संदर्भ (सुसंगठित समूह) राग कहलाता है। अतः राग उस गाने या बजांनें को कहते हैं, जो अपनी मधुर ध्वनि से समस्त सृष्टि के प्राणी को भा जाए। चाहे वह कण्ठ से गाया हो अथवा किसी वाद्य पर बजाया गया हो।

४. मानव जीवन में भक्ति संगीत ::

हमारी संगीत कला का ध्येय मोक्ष प्राप्ति है। हमारी भारतीय संगीत की परम्परा का आदर्श है मानव जीवन को आनन्द व शान्ति प्रदान करना। इसी आनन्द के अनुसंधान में संगीत के माध्यम से मनुष्य मानसिक और आध्यात्मिक शान्ति का मार्ग प्रस्तुत कर लेता है। शास्त्रों में कहा गया है कि मनुष्यों द्वारा गायन, वादन तथा नृत्य तंल्लीनता से किया गया हो तो वह भगवान विष्णु को प्रसन्न करता है।

'देवस्य मानवो गानं वाद्य नृत्यमतन्द्रितः।।

कुर्याद्विष्णोः प्रसादार्थमिति शास्त्रे प्रकीर्तितम्।।'[३१]

उपनिषदों में यह भी कहा गया है कि 'तघ इमे वीणायां गायंत्येतं ते गायंति तस्माते घनसनयः' अर्थात् वीणा द्वारा जो गान करते हैं वे परमात्मा का ही गान करते हैं और धनवान् होते हैं।[३२] श्री कृष्ण ने स्वयं कहा है कि 'वेदाना सामवेदोडस्मि'–

SMT. HANSA MEHTA LIBRARY
The M. S. University of Baroda

इस प्रकार भगवान् ने सामवेद रूप से साम–संगीत की स्वर लहरियों से प्रियजनों के अनेक प्रकार के कष्ट दूर किये थे।[33] भगवद् प्राप्ति के अनेक साधनों में से एक साधन है परमेश्वर की भक्तिमय संगीत सेवा। भक्ति और संगीत दोनों एक दूसरे के साथ जुड़े हुए हैं। संगीत कला के साथ भक्ति का समन्वय मनुष्य को जीवन के उच्चत्तम शिखर पर आरूढ़ करता है।

भक्ति और संगीत का सम्बन्ध शरीर और आत्मा के सम्बन्ध जैसा है। विद्वानों का मत है कि हमारा संगीत अति प्राचीन, पवित्र, अलौकिक ईश्वर रूप है। भगवान के गुणगान करनेवाले को कभी कोई भय नहीं रहता, क्योंकि संगीत का लक्ष्य आत्म कल्याण करना है। जहाँ संगीत है वहीं ईश्वर निवास करते हैं। स्वयं विष्णु नारद जी से कहते हैं 'हे नारद ! न तो मैं वैकुंठ में रहता हूँ और न योगियों के हृदय में, अपितु मेरे भक्त जहाँ गान करते हैं वहीं मैं निवास करता हूँ–

'नाऽहं वसामि वैकुण्ठे योगिनां हृदये न च।
मद्भक्ताः यत्र गायन्ति तत्र तिष्ठामि नारदः।।'[34]

श्रीमद् भागवत में कहा गया है कि – वह नारद धन्य हैं जो भगवान् की कीर्ति को अपनी वीणा पर गा–गाकर स्वयं तो आनन्दमग्न होते हैं, साथ–साथ इस त्रितापतप्त जगत् को भी आनन्दित करते रहते हैं।[35] भगवान् की परम प्रिय सखियों, सहचरियों एवं ब्रज गोपियों का भगवत् प्रेममय 'गोपी गीत' संसार प्रसिद्ध दिव्य संगीत है जिसके कारण अन्तर्हित भगवान् श्रीकृष्ण को गोपियों के बीच प्रकट होना पड़ा था।

'तासामाविरभूच्छौरिः स्मयमानमुखाम्बुजः।
पीताम्बरधरः स्त्रग्वी साक्षान्मन्मथमन्मथः।।'[36]

इस प्रकार हम कह सकते हैं कि संसार के समस्त प्राणी संगीत की भक्तिमयी आराधना द्वारा परम परमेश्वर का अनुग्रह प्राप्त कर सकते हैं।

हमारी भारतीय संगीत कला भी प्रारम्भ से धर्म का आधार लेकर चली है। यही नहीं, भारतीय संगीत की धार्मिक महत्ता पर प्रकाश डालते हुए रवीन्द्रनाथ कहते हैं– 'मुझे ज्ञात होता है कि भारतीय संगीत धार्मिक व्याख्या से परिपूर्ण मानवी अनुभवों की अपेक्षा दैनन्दिन अनुभूति से अधिक सम्बन्ध रखता है। संगीत का आध्यात्मिक मूल्य है। यह दैनन्दिन घटनाओं से आत्मा को मुक्त करता है और आत्मा एवं परमात्मा के सम्बन्ध का गीत गाता है। ..... हमारा संगीत श्रोता को दिन–दिन के मानवीय सुख–दुःख से दूर हटाकर, सृष्टि के मूल विश्रान्ति और त्याग की ओर ले जाता है।'[३७] इसीलिए संगीत रत्नाकरकार ने कहा है–'उस गीत के माहात्म्य की कौन प्रशंसा करने में समर्थ है? धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष को प्राप्त करने का यही एक साधन है।'[३८] संगीत के माध्यम से मनुष्य अपने हृदय में उत्पन्न नाद द्वारा रसात्मक भगवान की भक्ति सरलता, सहजता से कर सकता है। भर्तृहरि ने संगीत को मानव जीवन का अनिवार्य अंग माना है –

'साहित्य संगीत कला विहीनः।
साक्षात्पशुः पुच्छविषाणाहीनः।।
तृणं न खादन्नपि जीवमानः।
तद्भागधेयं, परमं पशूनाम्।।'[३९]

हिन्दू संस्कृति में तो जन्म से मृत्यु तक के समस्त मांगलिक कार्यों में संगीत जुड़ा रहता है। अतः सृष्टि के प्रत्येक कण–कण में संगीत को महसूस किया जाता है। संगीत हमारे लिए ईश्वर का दिया हुआ एक अमोघ वरदान है।

५. संगीत का साहित्यिक इतिहास ::

जब सम्पूर्ण सृष्टि और मावन जीवन के कण–कण में संगीत विद्यमान है तो साहित्य में भी संगीत का होना अनिवार्य है। साहित्य और संगीत की ओर दृष्टि करें तो हमें दोनों का ध्येय एक ही मिलता है। दोनों ही हृदय में शान्ति की अपूर्व धारा प्रवाहित कर सकते हैं। दोनों का उद्देश्य आत्मा को आनन्दित करना है तथा दोनों

का प्रभाव अत्यन्त व्यापक है और निरन्तर मनुष्य पर पड़ता रहता है। भागवतकार ने संगीत की आध्यात्मिक महत्ता की ओर संकेत करते हुए कहा है कलियुग दोषों का खजाना है, किन्तु उसका एक गुण है कि कलयुग में भगवान् श्री कृष्ण के संकीर्तन से प्राणीमात्र की सारी आसक्तियाँ छूट जाती हैं और परमात्मा की प्राप्ति होती है।

'कले दोंषनिधे राजत्रस्ति होको महान गुणः।
की र्तनादेव कृष्णस्य मुक्त संगः पर व्रजेत्।।'[४०]

यद्यपि संगीत शास्त्र के आचार्यत्व के लिए भगवान शंकर और मुनिराज नारद का नाम उल्लेखनीय है। तथापि नाट्यशास्त्र और काव्यशास्त्र की भाँति संगीत शास्त्र में भी इतिहास प्रसिद्ध प्रथम आचार्य का गौरव 'महामुनि भरत' को प्राप्त है। इन्होंने अपनी नाट्य रचना में गायन, वादन और नृत्य तीनों कलाओं का विस्तृत वर्णन किया है।[४१] वैदिक युग के पश्चात् भरत का नाट्यशास्त्र; ११ वीं शती में मिथिला के राजा नान्यदेव का 'हृदयालंकार'; पश्चिमी चालुक्य वंशज महाराज सोमेश्वर के 'अभिलषितार्थ चिन्तामणि'; जगदे मल्ल के 'संगीत चूड़ामणि'; चालुक्यवंशीय सौराष्ट्र नरेश हरिपाल द्वारा रचित 'संगीत सुधाकर'; सोमराज देव कृत 'भारतीय संगीत'; जयदेव रचित 'गीत गोविन्द'; सारंगदेव रचित 'संगीत रत्नाकर' आदि कुछ ऐसे बेजोड़ ग्रंथ हैं, जिनके आधार पर प्राचीन भारतीय संगीत की जानकारी प्राप्त हो सकती है।[४२]

भक्ताचार्योंने पुराणों और भागवत के आधार पर श्री कृष्ण को पूर्णावतार तथा बाकी चौबीस अवतारों को अंशावतार माना है। इनमें से दस अवतारों को मुख्य माना गया है, इन दशावतारों के गुण, चरित्रों के कीर्तन, श्रवण और स्मरण को भक्ति संगीत का मुख्य आधार माना गया है। कृष्ण भक्त कवियों ने अपने परब्रह्म के सगुण अवतारों के प्रति अपनी भक्ति भावना का काव्य के द्वारा प्रचार–प्रसार किया। इन भक्त कवियों ने अपने आराध्य के ऐसे सर्व समर्थ रूपों को जनता के सामने रखा कि जनता इन भक्त वत्सल रूपों पर मुग्ध–सी हो गई।

ईसा की चौथी शताब्दी में दक्षिण भारत में विष्णु की प्रेम भक्ति की रसमयी धारा आलवार भक्तों द्वारा प्रसारित की गई। आलवार भक्तों के उत्कर्ष का समय ईसा की सातवीं से नौवीं शताब्दी माना गया है। आलवार भक्त १२ हुए थे। इन्होंने भागवत धर्म और वैष्णव भक्ति का प्रचार किया। इन भक्तों में स्त्री प्रचारिकाएँ भी थी। इन भक्तों ने चार हजार गीत तमिल भाषा में लिखे जो 'प्रबन्धम्' के नाम से संग्रहित हैं। विद्वानों का मत है कि आलवार भक्तों के सिद्धान्त ही विभिन्न वैष्णव सम्प्रदायों की पृष्ठभूमि बने हैं। आलवार भक्तों ने वात्सल्य, दास्य और कान्त भावों से भगवान की भक्ति की और उन्हीं भावों को अपने गीतों में लिखा।

कृष्ण–काव्य की इस परम्परा में अब मैं कुछ मुख्य भक्त कवियों का तथा उनकी रचनाओं का संक्षिप्त परिचय प्रस्तुत करती हूँ –

जयदेव : विद्वानों ने जयदेव का समय ईसा की १२वीं सदी माना है। जयदेव का मुख्य ग्रंथ 'गीत गोविन्द' है। इसमें जयदेव ने राधा–कृष्ण की प्रेम लीला का वर्णन संस्कृत भाषा में किया है। जयदेव ने राधा कृष्ण के प्रति अपने भक्ति भाव को मधुर काव्य का रूप दे संगीत की स्वर लहरियों से सिद्ध किया है। गीत गोविन्द के प्रत्येक पद में आठ–आठ चरण होने से इन्हें अष्टपदी कहा जाता है। इस प्रकार गीत गोविन्द में २४ अष्टपदियाँ प्राप्त हैं। विद्वानों ने जयदेव को सम्प्रदाय की दृष्टि से विष्णुस्वामी परम्परा के अधिक निकट कहा है। गीत गोविन्द को भारतीय गीत काव्य की अमर कृति माना गया है। हवेली संगीत के भक्त कवियों और संगीतकारों में जयदेव को ऐतिहासिक दृष्टि से प्रथम स्थान प्राप्त है। पुष्टि सम्प्रदाय में नियत ऋतु में, नियत दिन पर जयदेव की कुछ अष्टपदियाँ कीर्तन में गाई जाती हैं।[४३]

विद्यापति : जयदेव के बाद दूसरा स्थान विद्वानों ने कवि विद्यापित का माना है। विद्यापित का समय ईसा की १४ वीं सदी माना गया हैं। राधा–कृष्ण की सम्मिलित उपासना इनकी भक्ति का नियम था। विद्यापति ने राधा–कृष्ण की प्रेमलीला का जो विशद वर्णन किया है उस पर विष्णुस्वामी तथा निम्बार्क मतों का

प्रभाव दिखाई पड़ता हैं। विद्यापति के पद सुंदर, स्निग्घ एवं भावपूर्ण होने से लोगों के हृदयों को स्पर्श कर चुके थे। इन भक्तिमय पदों में नख–शिख वर्णन, प्रेम–मिलन, रूप–वर्णन, मान, अभिसार और रति प्रसंगादी के वर्णन हैं। इस प्रकार के गीति पदों में प्रेममय भक्ति की उत्कृष्ट भावना के कारण भक्तिमार्गीय वैष्णव सम्प्रदायों में उनके पदगान को आदरणीय स्थान प्राप्त हैं। विद्यापति की रचनाएँ संस्कृत, मैथली एवं ब्रज भाषा में पाई जाती हैं। पुष्टि सम्प्रदाय में भी विद्यापति के कुछ पदों का गान कीर्तन में होता है।[४४]

विद्यापति के समय के बंगाल के भक्त कवि **चंडीदास** और दक्षिण के भक्त कवि **नामदेव** के नाम कीर्तन गान पद्धति में उल्लेखनीय हैं। इन दोनों भक्त कवियों ने श्री कृष्ण की लीलाएँ तथा अन्य २४ अवतारों के स्तुति गान अपनी लोक भाषा में किए हैं।

विद्वानों का मत है कि पुष्टिमार्गीय संगीत के पद गान के आरम्भिक समय से लगभग ५० वर्षों पूर्व भक्त **नरसिंह महेता** ने श्री कृष्ण की लीला के भावात्मक पदों का संगीत की शास्त्रीय राग–रागिनियों में गान किया था। भक्त नरसिंह के पद पुष्टि सम्प्रदाय के कीर्तन संग्रह में तो मिलते हैं किन्तु इनका गान सम्प्रदाय की षष्ठ पीठ (सूरत) में ही किया जाता है। नरसिंह के भक्ति प्रवाह में श्रीमद् भागवत पुराण का प्रभाव स्पष्ट दिखाई देता है। इनके पदों में कृष्ण जन्म के पद, वसन्त के पद, शरदोत्सव के पद, हिंडोला के पद इत्यादि लीलाओं का गान हुआ है। अतः कह सकते हैं कि नरसिंह की पद रचनाएँ अष्टछाप परम्परा के पद–गान के समान ही मिलती हैं।[४५]

कबीर का समय ईसा की १४ वीं सदी माना गया है। कबीर रामानंद के शिष्य थे। कबीर ने अपने काव्य में हिन्दू–मुस्लिम एकता, संसार की माया, हृदय की शुद्धि–प्रेम का महत्व, ऊँच–नीच, जाति–पाँति आदि सभी प्रकार के विषयों पर रचना की है। कबीर ने राम नाम महिमा, गुरु महिमा का विशद् वर्णन अपने काव्य में किया है। कबीर काव्य की भाषा में पंजाबी, ब्रज, खड़ी बोली, राजस्थानी, गुजराती

आदि कई भाषाओं की खिचड़ी है। अपने काव्य द्वारा कबीर ने भक्ति की मधुरता और प्रेम मय भक्ति का विशद् प्रचार पूरे देश में किया है।[४६] कबीर अनपढ़ थे अतः अपने काव्य को मौखिक रूप में (गा कर) जनता के समक्ष प्रस्तुत किया करते थे।

संगीताचार्य **गोपाल नायक** का समय विद्वानों ने १३ वीं सदी का अन्त तथा १४ वीं सदी का आरम्भ माना है। इनकी अमीर खुसरों से हुई संगीत प्रतियोगिता को इतिहास की विशेष घटना माना जाता है। उस समय संगीत के क्षेत्र में इनका ऊँचा नाम था। ये दक्षिण के राजा रामदेव यादव के आश्रित थे जो बाद में सुलतान अल्लाउद्दीन के लश्कंर के साथ उत्तर में लाए गए थे।

अमीर खुसरों का समय ईसा की १२ वीं सदी, विद्वानों ने माना है। खुसरों अरबी, फारसी, तुर्की, संस्कृत और हिन्दी के विद्वान थे। वे अच्छे कवि, संगीतज्ञ और गायक थे। खुसरों ने फारसी और भारतीय संगीत के मिश्रण से कई नए रागों की उद्भावना की थी। जिनमें ईमन, जीलफ, शहाना आदि का नाम आज भी उल्लेखनीय है। इसके अलावा ख्याल और कव्वाली का आविष्कार भी खुसरों ने किया था। वीणा आधार पर सितार नामक वाद्य यंत्र का आविष्कार भी खुसरों ने किया था। खुसरों के समय में जो मिश्रित गायन पद्धति प्रचलित हुई, उसी का विकसित रूप ख्याल की गायकी है।

२. पुष्टिमार्गीय कीर्तन संगीत :-

१. भक्ताचार्यों द्वारा संगीत का विकास ::

भारतीय इतिहास में ईसा की १३ वीं से १६ वीं सदी काव्य और संगीत की दृष्टि से बहुत उन्नत और महत्वपूर्ण रही है। इन शताब्दियों में भक्ति आन्दोलन के साथ संगीत का भी विशेष उत्कर्ष देखने को मिलता है। इस समय के धार्मिक आन्दोलनों ने प्रत्येक प्रांतीय भाषा के साहित्य को सराबोर कर दिया। जयदेव, विद्यापति आदि के पश्चात् राजनैतिक उथल–पुथल के कारण भक्ति के बीज कुछ लुप्त से हो गए थे जिसका पुनःप्राकट्य श्रीमद् वल्लभाचार्य, स्वामी हरिदास,

चैतन्य महाप्रभु, हित हरिवंश आदि भक्त आचार्यों ने किया। इन भक्ताचार्यों ने ईश्वर के सगुण रूप की प्रेम भक्ति का प्रवाह जन – जन के हृदय में संगीत के माध्यम से प्रवाहित किया। ईश्वर के भजन–कीर्तन का मार्ग बता कर इन भक्ताचार्यों ने सामान्य लोक के मानस को जागृत किया। इन भक्ताचार्यो ने लोक भाषा में भगवत् साहित्य की रचना द्वारा लोगों के हृदय को छू लिया। इन भक्ताचार्यों ने श्रीमद् भागवत महापुराण में वर्णित भगवान श्री कृष्ण के मधुर रूप का विशेष वर्णन किया है। श्रीकृष्ण की ब्रज लीला और गोपियों के प्रेम को भक्ति का माध्यम बनाया और अपने सिद्धान्तों व भक्तिमय उपदेशों को चारों दिशाओं में प्रवाहित किया।

'कृष्ण भक्ति कालीन कवि उच्च कोटि के भक्त थे। उनका ध्येय अपने आराध्य की उपासना में पूर्णतः लीन हो कर उनको प्राप्त करना था। अस्तु सांसारिक बंधनों को भूलकर अपने आराध्य के साथ एकाकार होने के लिए उन्होंने संगीत की शरण ली। हमारे मध्यकालीन साहित्य की विभूतियाँ उस समय के युग प्रवाह की उपज नहीं थी वरन् उनका निर्माण उन प्राचीनतम भारतीय परिवर्द्धनशील दार्शनिक परम्पराओं की ही सुदृढ़ भूमि पर हुआ था जो न कभी बँधी थी उत्तर, दक्षिण, पूर्व या पश्चिम की भौगोलिक परिधि में और न कभी म्लान या पल्लवित हुई थी किसी राज सत्ता विशेष के बनने या बिगड़ने से। हिन्दी साहित्य के किसी भी विद्यार्थी से छिपा नहीं कि पूर्व मध्यकाल का हमारा अधिकांश साहित्य कहलाने वाला अंग दार्शनिक चेतना से भरपूर है। उसके प्रस्तुत करनेवाले पेशेवर कवि नहीं थे और न किसी राजा या रईस के आदेश पर या उसकी काव्य पिपासा शांत करने के लिए अपनी लेखनी रंगनेवाले थे। काव्य–साधना के निमित् कुछ भी लिखना उनके जीवन का ध्येय नहीं था। वे तो विशुद्ध अर्थों में तत्वदर्शी मानवता का पाठ पढ़ानेवाले ईश्वरीय सन्देश वाहक थे। उनकी वाणी से अमर काव्य की मन्दाकिनी प्रवाहित अवश्य हुई और ऐसी हुई कि जिसकी तुलना कदाचित देश देशान्तरों के, युग–युगान्तरों के काव्य साहित्य में भी ढूँढे न मिलेगी।'[४७]

भक्ति काल में कृष्ण भक्ति शाखा में विशेषतः अनेक सम्प्रदायों का महत्व रहा है जो मुख्यतः श्री कृष्ण की ब्रज भूमि से जुड़ा रहा है। इसी भक्ति का एक रूप संगीत है जो ब्रज में भी विद्यमान था। संगीत का अधिकार तथा यथेष्ट पोषण देवालयों में हुआ है। कृष्ण भक्तिकालीन गायक कवियों के काव्य में संगीत प्रेरणा के प्रधान उपादान रहे हैं उनके आराध्य श्री कृष्ण तथा उनकी रसमयी लीलाएँ। इसके साथ ही इन भक्त कवियों ने मध्ययुगीन भारतीय समाज के धार्मिक, दार्शनिक और सांस्कृतिक जीवन के अनेक पक्षों को प्रेरित और प्रभावित किया। इन भक्त कवियों ने परमात्मा के साकार – निराकर तत्व के भजन कीर्तन को महत्व दे कर अखण्ड सुख की प्राप्ति का मार्ग दिखा कर तत्कालीन समाज को जागृत किया। अतः पुष्टिमार्ग के अष्टछापादि भक्त संगीताचार्यों के अलावा जिन्होंने भक्तिमार्ग की उत्कृष्ट पद रचना युक्त प्रभु गान–कीर्तन किया उनमें समकालीन स्वामी हरिदास, हित हरिवंश और चैतन्य महाप्रभु के नाम विशेष उल्लेखनीय हैं। इन महानुभावों का संक्षिप्त परिचय इस प्रकार है –

स्वामी हरिदास –

स्वामी हरिदास जी अष्टछाप भक्त कवियों के समकालीन भक्त कवि और धर्म प्रचारक थे। स्वामी जी वृन्दावन में रहते थे और महान संगीताचार्य थे। स्वामी जी ने राधा कृष्ण की युगल उपासना का केवल सखी भाव से प्रचार प्रसार किया। अपने संगीत के द्वारा स्वामी जी अपने इष्ट देव के समुख गान करते हुए अत्यन्त भाव विभोर हो जाते थे। 'गान विद्या में ये गन्धर्व थे और अपने गान से सखी की तरह सेवा करते हुए श्याम और श्यामा को संतुष्ट किया करते थे।'[४८] 'स्वामी जी की भक्तिमय संगीत उपासना के फल स्वरूप श्री बाँके बिहारी जी की मूर्ति का प्राकट्य हुआ, जो आज भी वृन्दावन में विद्यमान है।'[४९] स्वामी जी ने अपने प्रत्येक पद में अपने आराध्य इष्ट कुंज बिहारी की छाप लगाई है। स्वामी जी की दो रचनाएँ प्राप्त होती हैं – साधारण सिद्धान्त के पद और केलिमाल। केलिमाल के ११० पदों में स्वामी जी ने अनन्य भाव से श्याम–श्यामा की प्रेम लीलाओं का

वर्णन किया है। स्वामी जी के संगीतज्ञ आठ शिष्यों के नाम नाद विनोद ग्रन्थ में इस प्रकार दिए गए हैं – बैजू बावरा, गोपाल राय, मदन राय, रामदास, दिवार पंडित, सोमनाथ पंडित, तानसेन और राजा सौरसेन। दीपक राग के लिए तानसेन, मेघ राग के लिए बैजू बावरा और मालकोष राग के लिए गोपाल राय स्वामी हरिदास की गान–विद्या के ऋणी रहेंगें।[50] स्वामी जी के संगीत गान का आकर्षण असाधारण था। स्वयं अकबर सम्राट भी इनकी भक्ति, इनके संगीत शास्त्र तथा कला के गुणों की प्रशंसा सुनकर इनसे मिलने आया था। स्वामी जी के पद निम्न राग–रागिनियों में गाए जाते हैं–

> विभास, विलावल, आसावरी, सारंग, वसंत, कल्याण, मल्हार, नट, केदारो, कान्हरो, गौरी आदि।[51]

स्वामी जी के रचे बहुत से पदों का गान पुष्टिमार्गीय कीर्तन प्रणाली में होता है। स्वामी जी के शिष्य विट्ठल विपुन जी के कुछ पद पुष्टि सम्प्रदाय के कीर्तन संग्रह में दृष्टिगत होते हैं। स्वामी जी की गायकी के स्वरूप का प्रामाणिक साधन उपलब्ध नहीं है।

हित हरिवंश –

हरिदास के साथ हित हरिवंश जी भी अष्टछाप के समकालीन थे। हित जी ने राधा–कृष्ण की युगल उपासना का उपदेश दिया। कृष्ण से राधा की पूजा और भक्ति को इन्होंने अधिक महत्वशालिनी और शीघ्र फलदायिनी माना था। वृन्दावन के सेवा कुंज नामक स्थान में श्री राधा वल्लभ जी की मूर्ति की स्थापना के पश्चात् अष्ट आयाम सेवा का प्रारम्भ किया। राधा वल्लभीय सेवा प्रकार में पाँच आरती और सात समय माने गए हैं – मंगला समय, शृंगार, राजभोग, उत्थापन, संध्या, शयन और शैया। इनकी सेवा प्रणाली में श्री वल्लभ सम्प्रदाय का प्रभाव देखा जा सकता है। वल्लभ सम्प्रदाय में अष्ट समय की सेवा, शृंगार, भोग एवं संगीत कीर्तन की परिपाटी जिस समय समृद्ध हो रही थी उसी समय के आसपास हित हरिवंश जी के सम्प्रदाय में अष्टयाम सेवा, भोग, शृंगार तथा संगीत समाज का

आरम्भ होता देखा जा सकता है।[52] विजयेन्द्र स्नातक जी ने लिखा है कि 'जिस प्रकार वल्लभ सम्प्रदाय में श्री कृष्ण के गुणानुवाद के लिए कीर्तन प्रणाली है उसी प्रकार यहाँ समाज की व्यवस्था है। वल्लभ सम्प्रदाय में पुजारी ही मुखिया कहलाता है तथा जो कीर्तन करता है वह कीर्तनिया कहलाता है। किन्तु यहाँ समाज का प्रधान गायक मुखिया कहलाता है। प्रधान गायक का शेष समाजी अनुगमन करते हैं। अन्तरंग में प्रिय प्रियतम जो लीला करते हैं और सखियाँ उस समय जिस भाव का पद गान करती हैं बहिरंग समाज में उसी भाव का पद समाजी गाते हैं।[53] हित जी उच्च कोटि के संगीतज्ञ और गायक थे अष्टछाप के समान आपकी वाणी भी शास्त्रीय संगीत से समृद्ध थी। गुसाँई जी ने वल्लभ सम्प्रदाय की कीर्तन प्रणाली में आपकी वाणी को उचित स्थान दिया है। हित जी के लगभग १५ पद वल्लभ कीर्तन पोथी में संग्रहीत हैं। जो रास, साँझी, राधाष्टमी की बधाई में मुख्य रूप से गाए जाते हैं। हित जी द्वारा रचित पदों में जागरण, मंगला, मंगला आरती, शृंगार आरती, राजभोग आरती, उत्थापन, संध्या भोग, शयन, मान, कुंज, वन विहार, डोल, बसन्त वर्षा, दान तथा रास के पद अत्यधिक मात्रा में प्राप्त होते हैं। हित जी के पदों में निम्न राग देखने को मिलते हैं – भैरव, विभास, देव गंधार, खट, बिलावल, देवगिरि, टोडी, आसावरी, जयंतश्री, गुर्जरी, सूहा, धनाश्री, सारंग, नट, मालव, श्री, पूर्वी, मारु, गौरी, कल्याण केदारो, कामोद, भूपाली, कान्हरों, अडानो, विहागरों, मल्हार, गौड मल्हार, वसन्त, गुर्जरी। इसके अलावा अठताल, मूलताल, एक ताल, चौताल, रूपकताल, जय त्रिताल, चर्चरी तालों के नाम भी प्राप्त होते हैं।

हित हरिवंश के लिखे दो ग्रन्थ प्रसिद्ध हैं – एक है 'राधा सुधानिधि' जो संस्कृत भाषा में है और दूसरा 'हित चौरासी पद' जो ब्रज भाषा में हैं। इन ग्रंथों में राधा कृष्ण के विहार और प्रेम लीला का शृंगार वर्णन तथा उस भाव की अनुभूति का आनन्द वर्णित है। इन पदों में युगल उपासना तथा राधा उपासना का भाव स्पष्ट रूप से दिखाई देता है।

हित जी के शिष्य सेवकों में दामोदर दास, हरिराम व्यास, वृन्दावनदास चाचा जी का नाम विशेष उल्लेखनीय है। दामोदर दास जी भी अच्छे संगीतज्ञ थे। दामोदर दास के कतिपय पद वल्लभ सम्प्रदाय में 'दामोदर हित' अथवा 'हित दामोदर' के नाम से प्राप्त होते हैं, जो मुख्यतः राधाष्टमी की बधाई में गाए जाते हैं। हरिराम जी संस्कृत के प्रकाण्ड पंडित थे। श्रीमद् भागवत आदि पुराणों के वक्ता होने के कारण आप व्यास जी की उपाधि से सम्मानित थे। व्यास जी भी अपने समय के विद्वान संगीतज्ञ गायक थे। उस समय की ध्रुपद शैली की मान्यतानुसार आप पद गान किया करते थे। वल्लभ सम्प्रदाय में भी आपके कुछ पद प्राप्त होते हैं जो रास, साँझी, राधाष्टमी की बधाई में विशेष रूप से गाए जाते हैं। अपने पदों में आपने वाद्य यंत्रों के नाम भी दिए हैं – वीणा, रवाब, वेणु, सहनाई, मुखचंग, भेरि, डफ, मृदंग, दुदुम्भी, ढोल, रुंज, मुरज, दमामा, करताल आदि।

वृन्दावनदास चाचा जी की वाणी का व्यापक प्रचार – प्रसार राधा वल्लभ सम्प्रदाय में हुआ है। सम्प्रदाय में राग बद्ध गेय पदों अर्थात् साहित्य संगीत की भगीरथ गंगा बहाने का श्रेय चाचा जी को दिया जा सकता है। लगभग १२०० से भी अधिक पदों की रचना आपने की है जो प्राचीन द्रुपद–धमार शैली के प्रतीत होते हैं। उपरोक्त भक्त शिष्यों के अलावा चतुर्भुजदास, द्रुवदास, नेही नागरीदास, अनन्य अली, रसिक़दास के नाम भी हित जी की शिष्य परम्परा में लिए जाते हैं।

रास लीला के पुनः प्रारम्भ का श्रेय विद्वानों ने हित जी को दिया है। हित जी के साथ वल्लभाचार्य तथा गदाधर भट्ट भी थे। इन महानुभावों ने पुनः रास मंडल रचाया जिसमें नृत्य, संगीत एवं नाट्य को स्थान मिला।

चैतन्य महाप्रभु –

कृष्ण काव्य में चैतन्य महाप्रभु का नाम बड़े आदर से लिया जाता है। चैतन्य भगवान श्री कृष्ण के नाम, गुण लीला के संकीर्तन को करते–करते आनन्द विभोर हो नाचने लगते थे, और इनकी आँखों से प्रेमाश्रु बह निकलते थे। विद्वानों

का मत है कि ईश्वरपूरी नामक वैष्णव से चैतन्य ने राधा कृष्ण की भक्ति का मार्ग ग्रहण किया था। चैतन्य ने राधा–कृष्ण के युगल रूप के चरणों की उपासना की थी। चैतन्य ने राधा कृष्ण की भक्ति के पाँच रूपों – शान्ति, दास्य, वात्सल्य, साख्य और माधुर्य के अनुसार पाँच भावों – मनन, सेवा, स्नेह, मैत्री और दाम्पत्य पर बल दिया है।[५४] चैतन्य ने अपने आराध्य की लीलाओं का नृत्य सहित गान कर कृष्ण भक्ति को सरलता व सहजता से लोगों के हृदय तक पहुँचा दिया। चैतन्य ने कीर्तन के साथ गान और वाद्य का भी प्रयोग किया है। चैतन्य ने कोई सिद्धान्त सम्बन्धी ग्रन्थ नहीं लिखा। चैतन्य विद्यापति के पदों को गाते–गाते मूर्छित हो जाते थे।[५५]

चैतन्य सम्प्रदाय में सत्संग, नाम तथा लीला कीर्तन, ब्रज वृन्दावन वासी कृष्ण मूर्ति की सेवा पूजा आदि भक्ति के साधनों पर अधिक बल दिया गया है।

वल्लभ सम्प्रदायी वार्ता साहित्य से सिद्ध होता है कि वल्लभाचार्य तथा चैतन्य का समागम जगदीश्वर की यात्रा में हुआ था। वे एक दूसरे की भक्ति से भी काफी प्रभावित हुए थे। दीन दयालु गुप्त का विचार है कि आचार्य वल्लभ ने मधुर भाव की भक्ति का समावेश भागवत के अतिरिक्त चैतन्य महाप्रभु से भी लिया है। चैतन्य ने कृष्ण के साथ राधा की भक्ति को भी बड़ा माना है। वल्लभ सम्प्रदाय में राधा स्वकीया है और चैतन्य सम्प्रदाय में राधा परकीय रूपा हैं। विद्वानों का मत है कि चैतन्य की भक्ति से प्रभावित होकर वल्लभाचार्य ने बंगाली ब्राह्मणों को श्रीनाथ जी की सेवा में रखा था। चैतन्य ने वल्लभाचार्य की तरह प्रत्येक जाति के लोगों को भगवद् भक्ति का समान अधिकार दिया है।

चैतन्य के भक्त शिष्यों में रूप गोस्वामी, सनातन गोस्वामी, गोपाल भट्ट, रघुनाथ दास, रघुनाथ भट्ट और जीव गोस्वामी के नाम उल्लेखनीय हैं। जीव गोस्वामी ने वृन्दावन में राधा दामोदर के मंदिर की स्थापना की तथा गोपाल भट्ट ने राधा रमण की स्थापना की है।[५६]

२. पुष्टिमार्ग में कीर्तन का आरम्भ ::

पुष्टि सम्प्रदाय में परमानंद की प्राप्ति के हेतु संगीत कला को भक्ति का एक सचोट साधन माना है। वल्लभाचार्य ने पुष्टिमार्ग की स्थापना की और गिरिराज गोवर्धन पर प्रभु श्रीनाथ जी की सेवा का शुभारम्भ किया। जिसमें राग, भोग और शृंगार का सुन्दर समन्वय किया गया। इसमें प्रथम स्थान राग को दिया गया है ताकि लौकिक विषयों में पड़ी हमारी चित्तवृत्ति प्रभु में जुड़ी रहें । वल्लभाचार्य ने पुष्टिमार्गीय सेवा में. राग सहित कीर्तन करने का आवश्यक विधान किया हैं ।[५७] विट्ठलनाथ जी ने राग, भोग, शृंगार की सेवा भावना को बृहद् रुप दिया । जिसमें मुख्यः सम्प्रदायिक भावनानुसार साहित्य-संगीत समन्वित नवधा भक्ति विहित कीर्तन प्रणाली को स्थान दिया। जो क्रम आज भी पुष्टिमार्गीय मंदिरों में यथावत् रुप से चल रहा हैं।

३. पुष्टिमार्ग में कीर्तन की महिमा ::

राग उसे कहते है जो प्रभु अनुराग में वृद्धि करनेवाला हो। 'गीतं वाधं तथा नृत्यं त्रयं संगीतमुच्यते' ऐसी जिसकी व्याख्या है उस संगीत का ही अपार नाम कीर्तन है।[५८] पुष्टि जीव कीर्तन द्वारा प्रभु श्री नाथ जी से तादात्म्य स्थापित कर उनको पाना चाहता है – 'कलियुगे केशव कीर्तन।' अतः कलियुग में कीर्तन द्वारा प्रभु चरणों में अपनी साधना अर्पित कर मुक्ति पाने का प्रयास किया जाता है। कीर्तन का अर्थ है उल्लेख करना, पुकारना, गायन करना, दुहराना, सुनाना, घोषणा करना, संदेश पहुँचाना, प्रशंसा करना, गुण गान करना आदि।[५९] श्रीमद् भागवत में भी कीर्तन भक्ति की बहुत महिमा कही गई है। भागवत कार का कहना है : दोष-निधि कलियुग में एक ही महान गुण है कि भगवान् कृष्ण के कीर्तन से मनुष्य लौकिक आसक्ति से छूट जाता है।[६०] गीता में भी इसी सत्य की घोषणा करते हुए योगेश्वर श्री कृष्ण कहते हैं – यदि अतिशय दुराचारी भी अनन्य भाव से मेरा भक्त हुआ, मेरे को निरन्तर भजता है वह साधु ही मानने योग्य है, क्योंकि वह यथार्थ

निश्चय वाला है।[६१] नारद भक्ति सूत्र में कहा गया है – भगवान् के गुण के श्रवण और कीर्तन से भक्ति का साधन सम्पन्न होता है।[६२] वस्तुतः संकीर्तन के तीन अंग हैं – नाम कीर्तन, लीला कीर्तन एवं गुण कीर्तन।

पुष्टिमार्ग में गीत के माध्यम से लीला कीर्तन और गुण कीर्तन को विशेष स्थान दिया गया है। नाम, लीला और गुणादि का उच्च स्वर में कथन करना ही वस्तुतः कीर्तन है।[६३] शिव पुराण में भी कहा गया है कि कान से भगवान के नाम, गुण और लीलाओं का श्रवण, वाणी द्वारा उनका कीर्तन तथा मन के द्वारा उनका मनन ये तीन महान साधना हैं।[६४] निरोध लक्षण ग्रन्थ में वल्लभाचार्य ने कहा है – जब तक भगवान् अपनी महती कृपा भक्तों को दे तब तक साधन दशा में, ईश्वर के गुण नाम के कीर्तन ही आनन्द देनेवाले होते हैं।[६५] भगवान विष्णु के नाम संकीर्तन का उल्लेख ऋग्वेद में प्रसिद्ध मंत्र में मिलता है –

'तमुस्तोतारः पूर्व्य यशाविद् ऋतस्य गर्भ जनुषा पिपर्तन।

आस्य जानंतो नाम चिद्विवक्तन महस्ते विष्णो सुमति भजामहे।'

अर्थात् हे स्तुतिकारों! अनादि सिद्ध यज्ञ स्वरूप विष्णु को जिस प्रकार जानते हो उसी प्रकार स्तोत्रादि द्वारा प्रसन्न करो। विष्णु के अपार नामों की महिमा का कीर्तन करो। हे विष्णो! आप महान् हैं। आपकी सुमति का हम सेवन करते हैं।[६६] ओम्कार युक्त गोविन्द के पंचपद मंत्र का जो कीर्तन करता है उसे गोपाल श्री कृष्ण अपने स्वरूप का साक्षात्कार कराते हैं –

'ओम्कारेणात्ररितं ये जपंति गोविदस्य

पंचपदं मनुं तोषमसौ दर्शयेदात्मरूपं

तस्मान्मुमुक्षु रभ्यसेत्रित्यंशात्यै।'[६७]

विष्णु पुराण में कहा है कि – जिस प्रकार अग्नि से सुवर्णादि धातुओं का मैल नाश होता है उसी प्रकार भक्तिपूर्वक किया हुआ भगवत् कीर्तन सभी पातकों का नाश करने का उत्तम साधन है –

'यन्नाम कीर्तनं भक्तया विलापन मनुतमम्।

मैत्रेयाशेष पापनां धातूनामिव पावकः ।।' [६८]

भगवान श्री कृष्ण ने स्वयं कहा है – जो लोक लज्जा को छोड़कर उच्च स्वरों से मेरा गान करता है, नृत्य करता है मेरा ऐसा भक्त न केवल खुद को बल्कि सारे संसार को पवित्र करता है –

'विलज्ज उद्गायति नृत्यते चं

मद् भक्तियुक्तो भुवनं पुनाति।' [६९]

पुष्टिमार्गीय मतानुसार कीर्तन को पाँचवा वेद माना गया है क्योंकि जो लीलाएँ वेद और भागवत् में स्पष्ट नहीं हुई उन लीलाओं की झाँकी इन कीर्तनों में प्रकट हुई है। पुष्टिमार्ग के भक्ताचार्यों का मत है कि कीर्तन वाणी का यज्ञ है जिसके द्वारा जीव अपना लौकिक जीवन प्रभु के चरणों में अर्पित कर अलौकिक आनन्द को प्राप्त करता है। पुष्टि सम्प्रदाय में कीर्तन का एक अर्थ है कि 'पुष्टि भक्तों द्वारा गाया हुआ अपने पूर्ण पुरुषोत्तम श्री कृष्ण की लीला का गान।' पुष्टि भक्तों का मत है कि कीर्तन द्वारा हमारे हृदय की मलीनता दूर होती है तथा हमारा हृदय प्रभु के बिराजने योग्य बनता है। श्रीमद् भागवत महात्म्य् में उल्लेख है कि भगवान् विष्णु के सन्मुख जब कीर्तन गान होने लगा तब शिव–पार्वती, ब्रह्मा–ब्रह्माणी आदि भी कीर्तन सुनने के लिए सभा में आए। प्रहलाद करताल बजाने लगे, उद्धव झाँझ बजाने लगे, देवर्षि नारद वीणा की ध्वनि करने लगे, इन्द्र मृदंग बजाने लगे तथा अर्जुन मीठे कण्ठ से गान करने लगे। भक्ति, ज्ञान और वैराग्य नृत्य करने लगे थे इस अलौकिक कीर्तन से भगवान अत्यन्त प्रसन्न हुए।[७०]

४. पुष्टिमार्गीय सेवा में कीर्तन गान का क्रम ::

पुष्टिमार्गीय मंदिरों में बिराजते प्रभु श्रीनाथ जी अपना समस्त क्रम कीर्तन से ही करते हैं। कीर्तन से जागते हैं, कीर्तन से श्रृंगार धरते हैं, कीर्तन से भोग आरोगते हैं और कीर्तन से ही पौढ़ते हैं। इस प्रकार पुष्टिमार्ग के दोनों आचार्यों ने कीर्तन की सेवा को सर्वप्रथम कुम्भनदास को देने के पश्चात् बाकी कीर्तनकारों को

भी धीरे–धीरे शरण में लिया था। जिसका विस्तृत रूप विट्ठलनाथ जी ने अष्टछाप की स्थापना के रूप में प्रस्तुत किया है।[७१] विट्ठलनाथ जी ने श्रीनाथ जी की आठों झाँकियों में उनकी लीला भावना और समय तथा ऋतु के अनुसार रागों द्वारा कीर्तन करने की व्यवस्था की थी जो आज भी पुष्टिमार्गीय मंदिरों में विद्यमान है। पुष्टिमार्ग मंदिरों में श्रीनाथ जी की सेवा के दो क्रम निर्धारित हैं –

(१) प्रातः काल से सांयकाल पर्यन्त की नित्य सेवा तथा

(२) बारह महीनों की तथा छ ऋतुओं की वर्षोत्सव सेवा।

नित्य सेवा विधि में आठ समय के उत्सव होते हैं –[७२]

	सेवा		**समय**
१.	मंगला	–	प्रात ५ बजे से ७ बजे तक
२.	श्रृंगार	–	प्रात ७ बजे से ८ बजे तक
३.	ग्वाल	–	प्रात ९ बजे से १० बजे तक
४.	राजभोग	–	प्रात १० बजे से १२ बजे तक
५.	उत्थापन	–	दिन के ३ ।। बजे से ४ ।। बजे तक
६.	भोग	–	लगभग सायं ५ बजे से
७.	संध्या आरती	–	सायं लगभग ६ ।। बजे से
८.	शयन	–	रात्रि के ७ बजे से ८ बजे तक

नित्य सेवा उत्सव में वात्सल्य भाव की प्रधानता रहती है। प्रत्येक सेवा में मुख्य कीर्तनिया के साथ उसके आठ सहायक होते हैं जिन्हें झालरिया कहा जाता है, जो गायन तथा वाद्य बजाने में कीर्तनकार को सहयोग देते हैं। मंगला का कीर्तन परमानंददास द्वारा होता था, जो जागरण, खण्डिता, अनुराग, दधि मंथन के पद का गान करते थे। श्रृंगार कीर्तन का गान नंददास करते थे, जो बालरूप की सुंदरता, ठाकुर जी के नाना प्रकार के वस्त्राभुषण, साज–सज्जा के पद का गान करते थें। ग्वाल समय में कीर्तन गान गोविन्द स्वामी करते थे, जिसमें सख्य भाव, कृष्ण के खेल चौगान, चकडोरी आदि तथा गोचारण, गोदोहन, माखन चोरी,

पालना, धैया आरोगन के पदों का गान करते थे। राजभोग के समय में मुख्य कीर्तन कुम्भनदास करते थे तथा बाकी कीर्तनकार भी साथ में कीर्तन करते थे, जिसमें छाक के पद का गान होता था। उत्थापन में सूरदास का कीर्तन होता था, जिसमें गोटेरन, वन लीला तथा अन्य लीला के पद का गान होता था। भोग के समय में चतुर्भुजदास का कीर्तन होता था जिसमें कृष्ण रूप, गोपी दशा, मुरली, रूप–माधुरी, गाय, गोप से सम्बन्धित पद का गान होता था। संध्या आरती का कीर्तन छीतस्वामी करते थे जिसमें गो, ग्वाल सहित बन से आगमन, गो दोहन, वात्सल्य भाव से यशोदा का बुलाना आदि के पद गान होते थे। शयन में कृष्णदास कीर्तन करते थे जिसमें अनुराग, गोपी भाव से निकुंज लीला संयोग शृंगार के पद का गान होता था।[७३]

श्रीनाथ जी को जगाने के पूर्व ही शंख नाद, घंटा–नाद और वीणा के मधुर नाद (संगीत) का आरम्भ हो जाता है। यही नहीं, नित्यक्रम में ऋतु अनुसार रागों में प्रातः स्मरणीय श्री वल्लभाचार्य तथा श्री विट्ठलनाथ जी की विनंती के पद गान के बाद श्री नाथ जी को जगाने के भाव का जब कीर्तन गान गाया जाता है तब श्रीनाथ जी को जगाया जाता है।

वर्षोत्सव सेवा विधि में बारह महीने तथा छः ऋतुओं के उत्सवों, अवतारों की जयंतियाँ, लोक त्यौहारों और वैदिक पर्वों का समावेश होता है। वर्षोत्सव सेवा में स्वकीया तथा परकीया प्रेम भावना, लोक भावना तथा ब्रह्म भावना का कृष्ण सेवा में विनियोग मिलता है। वर्ष के ३६५ दिनों के विभिन्न उत्सवों पर गाये गए पद पुनः दूसरे वर्ष उसी दिन सुने जा सकते हैं। वर्षोत्सव के पदों का क्रम जन्माष्टमी से प्रारम्भ होता है। जन्माष्टमी के अवसर पर गाये जानेवाले पदों में श्री कृष्ण के प्राकट्य एवं बधाई के पद, ढाढी, पालना, अन्नप्राशन, कर्ण छेदन, मुत्तिका भक्षण, ऊखल–बन्धन, बाल लीला संबंधी पद गाए जाते हैं। दान के पदों में कृष्ण और गोपियों के संवाद, यशोदा से श्री कृष्ण की शिकायत तथा गोरस दान के पदों का गान होता है। साँझी के पदों में राधा का साँझी पूजन, श्री कृष्ण से

मिलन आदि के पदों का गान होता है। नवरात्री से विजयादशमी तक मुरली के पद, करखा के पद गाए जाते हैं। विजयादशमी से शरद पूर्णिमा तक रास लीला के पदों का गान होता है। शरदोत्सव के पश्चात् गोवर्धन पूजा के पद गाए जाते हैं जिसमें इन्द्रमान भंग तथा गोवर्धनधारण संबंधि पद आते हैं। गिरिराज गोवर्धन की पूजा के बाद अन्नकूट वर्णन के पद गाए जाते हैं जिसमें इन्द्र पूजा का निषेध, गोवर्धन पूजा, गोवर्धन धारण, अन्नकूट आरोगन के पद गाए जाते हैं। देव प्रबोधिनी एकादशी के पश्चात् शीतकालीन पदों का प्रारम्भ होता है जिसमें खण्डिता के पद विशेष गाए जाते हैं। वसन्त पंचमी तक वसन्त ऋतु वर्णन, राधा–कृष्ण–गोपिकाओं की मिलन की आतुरता के पद गाए जाते हैं। फागुन पूर्णिमा में होरी धमार के पद आते हैं जिनमें होली खेलने का सुन्दर वर्णन होता है तथा ब्रज के लोक जीवन का भी मनोरम वर्णन इन पदों में होता है। होली के पश्चात् राम नवमी, अक्षय तृतीया, नृसिंह चतुर्दशी आदि के अवसर पर जन्म संबंधी तथा चन्दन धराने के पद गाने की प्रणाली है। गंगा दशमी को गंगा महात्मय के पद एवं स्नान यात्रा के उत्सव के दिन स्नान संबंधी पद गाए जाते हैं। स्नान यात्रा से रथ यात्रा तक कुन्ज, पनघट, नाव के पद गाने की प्रणाली है। साथ ही प्रभु की रथ यात्रा के पद भी गाए जाते हैं।[७४]

५. कीर्तन में प्रयुक्त राग ::

ऋतु अनुसार राग – रागिनियाँ –

वल्लभ सम्प्रदायी मंदिरों के कीर्तन गान में ऋतु अनुसार रागों का पालन किया जाता है। इस नियम का पालन नित्य सेवा तथा वर्षोत्सव सेवा की आठों झाँकियों में किया जाता है। जैसे मंगला में प्रातः राग विभाव अथवा भैरव राग गाये जाने की परम्परा है; श्रृंगार सेवा में रामकली, बिलावल; ग्वाल सेवा में असावरी, तोडी आदि ; राजभोग के समय में सारंग, आसावरी राग गाए जाते हैं; उत्थापन के समय में धनाश्री, भीमपलासी; संध्याभोग के समय में गौरी, नट, पूर्वी; संध्या

आरती में पूर्वी, श्री तथा शयन में बिहाग, मालव तथा केदार आदि रागों में पद गाए जाते हैं।[७५] वर्षोत्सवों में उत्सवों के अनुसार ऋतु में बंधकर कीर्तन गान किया जाता है जिसमें कुछ रागों की प्रधानता होती है जैसे – जन्माष्टमी की बधाई में सभी राग–रागिनियाँ गाई जाती हैं। साँझी उत्सव में गौरी तथा पूर्वी राग के साथ बिलावल, रामकली, नट, सारंग, अडाना, कान्हड़ा आदि रागों के गान द्वारा प्रभु को रिझाया जाता है। रासोत्सव में भैरव, विभास, रामकली, बिलावल, सुधराई, खट्, टोडी, आसावरी, सारंग, मालव, पूर्वी, जैजेवन्ती, नट, मारु, गौडी, कल्याण, यमन, कान्हरा, अडाना आदि रागों में पद गाना होता है। हिन्डोला में सभी रागों के पद गान होते हैं। होली के उत्सव में रायसा, मल्हार, जंगला, मारु आदि रागों में पद गान होता है। बसन्त पंचमी के उत्सव में बसन्त राग मुख्य गाया जाता है। रथयात्रा से रक्षाबन्धन तक मल्हार राग का प्राधान्य रहता है। इसके अलावा वृन्दावनी, सारंग तथा नूर सारंग ग्रीष्म ऋतु में विशेष गए जाते हैं। शीतकाल में भैरव, विभास, रामकली, ललित, मालकोष, देवगंधार, खट, यमन, बिलावल, सुधराई, टोडी, असावरी, जैत श्री, धना श्री। इस प्रकार देखें तो पुष्टिमार्गीय कीर्तन में परम्परागत रागों की ही प्रधानता रही है।

६. अष्टछाप द्वारा प्रयुक्त राग–रागिनियाँ ::

पुष्टिमार्गीय कीर्तन संगीत शास्त्रीय संगीत पर आधारित है। जैसा कि हम पहले कह चुके हैं संगीत का आधार सप्त स्वर है। इन स्वरों से मूलतः हिंडोल, दीपक, भैरव, मालकोष, श्री और मेध इन छह रागों की उत्पत्ति हुई है। प्रत्येक राग की पाँच–पाँच स्त्रीयाँ मानी गयी हैं, जिनको रागिनियाँ कहते हैं ये रागिनियाँ तीस हैं। प्रत्येक की अड़तालीस (४८) संततियाँ मानी गई हैं।[७६] इस प्रकार भारतीय संगीत में राग–रागिनियों का विशाल परिवार है। खट ऋतु की वार्ता में निम्न लिखित उल्लेख मिलता है –

'ता पाछें श्री ठाकुर जी ने छत्तीसों राग–रागिनी को बुलाय के आज्ञा करी जो तुम छै–छै सखी रुप होय के छत्तीसों बाजेन सहित एक–एक ऋतुन की निकुंजन में छै–छै समै अनुसार श्री स्वामिनी जी की आज्ञा ते नृत्य, गान तथा बाजे सावधानीसों बजाइयों। तब छतीसों राग–रागिनी श्री ठाकुर जी को दण्डवत करिके छेओं ऋतुन के छेओं निकुंज में छै–छै बाजे सहित छै–छै पधारें। सो तिन छत्तीसो राग रागिनीन के तथा छत्तीसों बाजेन के नाम कहते हैं।'

राग रागिनियों के नाम निम्न प्रकार दिए हुए हैं –[७७]

मल्हार, ललित, पंचम, आसावरी, भैरव, मालव, टोडी, कल्याण, गुर्जरी, मालवा, गौडी, बिलावल, धनाश्री, रंगिली, खमाज, देसाख, कान्हरो, गौड–मल्हार, केदारो, खट (मंजरी), रामकली, गिंघारी, बराडी, कुकुभ, कामोद, नट, गुनकली, माघवी, देस, विभास, हास, काफी, सोरठ, ईमन, जैजैवंती, सारंग।

सूरदास के पदों में राग–रागिनियों की ओर संकेत किया गया है–

'छहों राग छतीसों रागिनि, इक इक नीके गावेंरी।'[७८]

ललित, पंचम, खट, मालकोष, हिंडोल, मेध, मालव, सारंग, नट, सांवत, भूपाली, ईमन, कान्हरौ, अडाना, नायकी, केदारौ, सोरठ, गौड मल्हार, भैरव, विभास, बिलावल, देव गिरि, देशख, गौरी, श्री, जैत श्री, पूर्वी, गोडी, आसावरी, रामकली, गुन कली, सुधराई, जैजैवन्ती, सूहा, सिन्धूरा, प्रभाती।[७९]

कुम्भनदास ने मुख्यतः निम्न रागों में अपने पद गाए हैं–

श्री, धनासिरी, रामकली, सारंग, गौरी, नट, केदारो, देव गंधार, बिलावल, नट नारायण, कनारो, विभास, कल्याण, आसावरी, मल्हार, वसन्त, मावलगोडी, पीलों, भैरव, ललित, मालकोस, विहागरो आदि।[८०]

कृष्णदास अधिकारी ने मुख्यतः निम्न रागों में अपने पद गाए हैं –
भैरव, रामकली, ललित, मालकौस, खट, रामग्री, देव गंधार, विभास, हिंडोल, वसंत, पंचम, बिलावल, सूहा, गूर्जरी, टोडी, घनाश्री, आसावरी, सारंग, सोरठ, मेघमल्हार, मल्हार, नट नारायण, मालव गौड, नट, गौरी, मालव, पूर्वी, श्री, मारु, काफी, ईमन, कल्याण, हमीर, केदारो, कान्हारो, सुघराई, नायकी, अडाना, जैजैवंती, रायसा, विहाग, विहागरो। [81]

परमानंद दास ने अपने पदों में मुख्यतः निम्न लिखित रागों का प्रयोग किया है –
ललित, मालकोंस, भैरव, रामकली, रामग्री, दैव गंधार, विभास, खट, वसंत, परज, पंचम, बिलावल, सूहा, गुर्जरी, टोडी, आसावरी, धनाश्री, सामेरी, सारंग, सोरठ, मल्लार, देसाख, नट, गौरी, मालव, पूर्वी, श्री, जेत श्री, मालश्री, मारु, काफी, हमीर, ईमन, कल्याण, केदारो, जैजैवंती, कानसे, नायकी, रायसो, अडानो, बिहाग, बिहागरो।[82]

गोविन्द स्वामी ने मुंख्यतः निम्न रागों में पद गान किया है –
भैरव, रामकली, विभास, ललित, मालकोंस, रामग्री, दैव गंधार, बिलावल, टोडी, आसावरी, धनाश्री, सारंग, वसन्त, सोरठ, मल्हार, नट, पूर्वी, श्री, जेत श्री, माली गौरा, गौरी मालव, हमीर, ईमन, कल्याण, केदारो, कानरो, अडानो, रायसो, बिहाग, बिहागरो। [83]

छीतस्वामी के पदों में मुख्यतः निम्न राग मिलते हैं –
भैरव, रामकली, विभास, दैवगंधार, ललित, वसंत, बिलावल, गुर्जरी, टोडी, आसावरी, धनाश्री, सारंग, सोरठ मल्हार, देसाख, नट, पूर्वी, श्री, जेत श्री, माली गौरा, माल श्री, जोनपुरी, काफी, हमीर, ईमन, कल्याण, केदारो, कानरो, नायकी, हमीर कल्याण, रायसो, अडानो, बिहाग, बिहागरो। [84]

चतुभुर्जदास के गाये पदों में मुख्यतः निम्नलिखित राग मिलते हैं –
भैरव, माली गौरी, माल श्री, ललित, रामकली, रामग्री, दैव गंधार, विभास, वसंत, पंचम, बिलावल, सूहा, टोडी, आसावरी, धनाश्री, सामेरी, सारंग, सोरठ मल्हार, नट, नट नारायण, गौरी, मालव, पूर्वी, जेत श्री, मारु, काफी, हमीर, ईमन, कल्याण, केदारो, कानरो, रायसो, अडानो, बिहाग, बिहागरो। [८५]

नन्ददास के पदों में हमे मुख्यतः निम्न राग मिलते हैं –
ललित, मालकोंस, भैरव, रामकली, दैव गंधार, विभास, खट, वसंत, पंचम, बिलावल, टोडी, आसावरी, धनाश्री, सारंग, मल्हार, मालव गौरी, खय सुघराई, देसाख, नट, गौरी, पूर्वी, मारु, काफी, हमीर, ईमन, कल्याण, केदारो, जैजैवंती, कानरो, नायकी, अडानो, बिहाग, बिहागरो, स्याम कल्याण, बडहंस। [८६]

वल्लभाचार्य के समय की कीर्तन प्रणाली में छः राग और ३० रागिनियों का ही गान श्रीजी के सम्मुख होता था।[८७] तत्पश्चात् विठ्ठलनाथ जी ने षटऋतु के मनोरथ और छप्पन भोग के महोत्सव के समय से ५६ प्रकार की सामग्री के साथ संगीत के अन्य राजस प्रकृति के राग भी श्रीनाथ जी को अंगीकार कराए और कीर्तन गान में भी रागों की संख्या ५६ कर दी। ये ५६ राग निम्न प्रकार के हैं–[८८]

भैरव, रामकली, ललित, मालकोंष, रामग्री, दैव गंधार, बिलावल, सुहा, टोडी, आसावरी, धनाश्री, सारंग, वसन्त, सोरठ, मल्हार, मेघ मल्हार, खरज, गुर्जरी, कान्हरों, हिंडोल, पंचम, सामेरी, मालव, नट, नट नारायण, पूर्वी, श्री, जेत श्री, मालश्री, मारु, काफी, हमीर, ईमन, कल्याण, केदारो, नायकी, रायसो, अडानो, बिहागरो, चेती–गौरी, श्याम–कल्याण, जैजैवन्ती, विहाग, खमज, हमीर–कल्याण, सुधराई, सामंत–सारंग, गोड–सारंग, नट–बिलावर, अल्हैया–बिलावल, गोड–मल्हार, सोरठ–मल्हार, मालव गौरी, देसाख, केदारो ।

यहाँ ये कहना अति आवश्यक है कि एक ही राग के कई अन्य नाम भी हमें देखने को मिलते हैं –[८९]

१. धन्यासी, धनासी, धनाश्री, धन्यासिरी, धनासिरी, धनासरी

२. अडानो, अडानौ, अडाना

३. गोरी, गौरी

४. बिहागरो, बिहागरौ, बिहाग, बिहागडा, बिहागडौ

५. केदारो, केदारौ, केदारा, केदार

६. इमन, ईमन

७. जयतश्री, जैत श्री

८. भूपाल, भोपाल, भूपाली, भोपाली

९. जय जय वंती, जै जै वंती

१०. मालवगौरी, मालवगौडी, मालवगौरा

११. मालव कौशिक, माल–कोस, मालव गौरा

१२. कान्हरा, कन्हरो, कान्हरौ, कानरो, कान्हडो

१३. पूरवी, पूर्वी, पूरबी

१४. मारु, मारवो

१५. सूहौ, सूहा

१६. असावरी, आसावरी

१७. भैरो, भैरव, भैरु

१८. देसाख, देवसाख, देशाख

७. अष्टछाप के समय के संगीतपयोगी वाद्य ::

अष्टछाप के समय के संगीतोपयोगी वाद्यों के नाम, प्रकार : वैदिक साहित्य में चार प्रकार के वाद्य कहे गए हैं –[९०]

१. तत् वाद्य –

तार अथवा ताँत की तन्त्रियों से युक्त जिन वाद्यों को नख, मिजराव, अथवा धोड़े की कमान से रगड़ कर बजाते हैं, तथा जिनसे सात स्वर, बाईस रुति, इक्कीस मूर्छना, तान और अलंकार आदि सभी प्रकट होते हैं तत् वाद्य कहलाते हैं।

२. सुषिर वाद्य –

सुषिर वाद्य फूँक कर बजाया जाता है।

३. आनद्ध वाद्य –

वे वाद्य जो भीतर से पोले तथा चमड़े से मढ़े हुए होते हैं और हाथ या किसी अन्य वस्तु के ताड़न से ध्वनि उत्पन्न करते हैं वे वाद्य यंत्र आनद्ध कहलाते हैं।

४. धन वाद्य –

धन वाद्य ठोकर से बजाये जाते हैं। इस प्रकार के वाद्य प्रायः सभी ताल वाद्य है। वे वाद्य काँसे, पीतल या लकड़ी के बने हुए होते हैं। ये वाद्य अपना पृथक अस्तित्व नहीं रखते हैं अन्य वाद्यों के साथ बजने पर ही सुन्दर लगते हैं।

अष्टछाप के कृष्णदास ने अपने पदों में वाद्य के नाम इस प्रकार बताएँ हैं – बीन, रवाब, किन्नरी, अमृत कण्डली, यंत्र, बांसुरी, स्वर राय गिड गिडी मण्डली, पिनाक, महुवरि, जलतरंग, मदन भेरी, शहनाई, कठताल, ताल, झांझ, खंजरी, झालर, शृंगी, शंख, मुखचंग, डफ, डिमडिम, ढोल, मृदंग, निशान, नगाडा, दुंदुभि।[११]

सूरदास ने सूर सारावली में तत्कालीन २६ वाद्यों के नाम इस प्रकार बताएँ हैं –

रुंज, मुरज, डफ, ताल, बांसुरी, झालर, बीन, रवाब, किन्नरी, अमत कण्डली, यंत्र, स्वर मण्डल, जल तरंग, पखावज, आवज, उपंग, शहनाई, सारंगी, कांस्य ताल, कठताल, शृंगी, मुखचंग, खंजरी, प्रणव, पटह, नफीर।[१२]

खट ऋतु की वार्ता में चतुर्भजदास ने ३६ वाद्यों के नाम दिए हैं –

बीनाचीन, मुरली, अमृत कुण्डली, जलतरंग, मदनभेरी, धौसा, दुंदुभि, निशान, नगाडा, शंख, घण्टा, मुखचंग, शृंगी, खंजरी, ताल, कठताल, मंजीरा, मुहवारी, थाली, झालर, ढोल, डफ, डिमडिम, झाँझ, मृंदग, गिड गिड, पिनाक, रवाब, यंत्र, स्वर मंडल, शहनाई, सारंगी, दुतारी, करताल, तुरही, किन्नरी।[९३]

शास्त्रों के प्राचीन उल्लेखानुसार चार प्रकार के वाद्य हैं जो हम आगे कह चुके हैं। इन चारों प्रकार के वाद्यों में प्रत्येक प्रकार का एक–एक वाद्य प्रातःकाल की सेवा के आरम्भ में ही नियमबद्ध किया गया था –[९४]

१. तत् वाद्य में प्राचीन वीणा (बीना) जिसका वादन प्रातः काल ऋतु अनुसार राग में मंद–मंद मधुर आलाप के साथ किया जाता था। वीणा के बाद सारंगी, रवाब, सितार का प्रचलन् बढ गया।

२. सुषिर वाद्य में बांसुरी, शहनाई, महुविर, मुखचंग, सिंगी तथा शंख के नाम आते हैं। शंख वाद्य द्वारा तीन बार शंख ध्वनि की जाती थी।

३. आनद्ध वाद्यों में मृदंग, पखवाज, रुंज, दुँदुभि, ढोल, डिमडिम, डफ, निशान, खंजरी आदि का उल्लेख आता है।

४. घन वाद्य में ताल, कठताल, झालरि, झाँझ, मंजीरा, घुंघरु, जलतरंग आदि के नाम उल्लेखनीय हैं।

पुष्टिमार्गीय कीर्तनकार नित्य उत्सवों में थोड़े वाद्यों का उपयोग करते थे तथा विशेष उत्सवों में अधिक वाद्यों का उपयोग करते थे। होली के अवसर पर सबसे अधिक वाद्यों का उपयोग होता था।

चौरासी वैष्णवन की वार्ता तथा श्री गोवर्धननाथ जी की प्राकट्य वार्ता के अनुसार पखावज वादकों में श्याम कुम्हार, मृदंग में घोघी, वीणा वादन में श्याम पखावजी की पुत्री ललिता तथा सारंगी वादन में क्षत्रिय जाति के ध्यानदास का नाम मिलता है।[९५]

८. पुष्टिमार्गीय कीर्तन में प्रयुक्त गायन शैली ::

अष्टछाप के काव्य की रचना कीर्तन के लिए हुई थी इसलिए यह गेय काव्य है। इस गेय काव्य में शब्द और भाव के साथ स्वर साधना का भी सामंजस्य है। हिन्दी के प्राचीन गेय काव्य का उत्कृष्ट स्वरूप हमारा पद साहित्य है जिसका विशेष गौरव अष्टछाप कवियों की रचनाएँ हैं। अष्टछाप के सभी महानुभाव पदों की रचना स्वयम् ही करते थे और स्वयम् ही उसे स्वर बद्ध भी करते थे।[९६]

१. ध्रुपद धमार गायन शैली –

'अष्टछाप गायन की प्रमुख शैली ध्रुपद एवं धमार थी। ध्रुपद शैली का प्रचार ब्रज के सभी भक्ति सम्प्रदायों में और तत्कालीन मुसलमान सम्राटों एवं हिन्दू राजा महाराजाओं के दरबारों में था। किन्तु धमार की गायकी विशेष रूप से वल्लभ सम्प्रदाय में प्रचलित थी, और उसे अष्टछाप कीर्तनकार अधिकतर होली के उत्सवों में गाते थे। मुगल सम्राटों एवं राजा–महाराजाओं के दरबारी गायकों ने ध्रुपद शैली को कुछ विकृत कर दिया था, किन्तु अष्टछापी कीर्तनकार उसका गायन शुद्ध रूप में करते थे।'[९७] ये अष्टछाप भक्त कवि सर्वोत्कृष्ट संगीतज्ञ तथा साहित्य के प्रणेता थे। अष्टछाप भक्त संगीतज्ञों की वाणियों से स्पष्ट है कि उनकी गान शैली शुद्ध भारतीय संगीत की समर्थक ध्रुपद– धमार गेय विद्या पर आधारित थी। इन सभी भक्तों ने कीर्तन के रूप में संगीत कला को मन का निराध करने के एक साधन के रूप में अपनाया। ध्रुव दास जी ने परमानन्द दास, सूरदास, कुम्भनदास तथा कृष्णदास के गायन की प्रशंसा में कहा है –[९८]

'परमानंद अरु सूर मिलि गाई सब ब्रज रीति।
भूलि जात विधि भजन की सुनि गोपियन की प्रीति
कुम्भनदास कृष्णदास गिरिधर सौ कीनी सांचि प्रीति
कर्म धर्म पथ छाडि के गाई निज रस रीति।'

पंडित भातखण्डे जी इत्यादि पंडितों ने आधुनिक संगीत का उत्थान काल ग्वालियर के राजा मानसिंह तक ले जाकर राजा मान को इसका श्रेय दिया है।

आईने–अकबरी में भी कहा है कि राज मानसिंह ने बक्षू, भानू और बैजू की सहायता से ध्रुपद शैली का प्रचार किया था। किन्तु वल्लभाचार्य ने भी अपने देवालय में संगीताचार्य कुम्भन, सूर, परमानंद और कृष्णदास जैसे भक्त कविवरों द्वारा आज की ध्रुपद शैली का अधिकांश उद्भव किया है। इनकी सहस्त्रावधि ध्रुपद –धमारादि की रचनाओं का सम्प्रदाय में आज भी गान किया जाता है। विद्वानों का मानना है इस प्रकार भारतीय संगीत का उद्गम राज्यालय और देवालय दोनों में लगभग समान समय में होता है। ध्रुपद गायन की चार कड़ियाँ विकसित हुई थि –

गऊहरहारी, डागुरी, खंडारी तथा नौहारी।[९९]

ध्रुपद में राग, तान और ताल की नियमित योजना के साथ छंदबद्ध अथवा तुकांत कविता का गायन किया जाता है। इसके गायन के लिए संस्कृत निष्ठ भाषा में कथित शृंगार रसपूर्ण काव्य उत्तम वाणी एवं देव मंदिर अथवा देव मूर्ति का सानिध्य उत्तम स्थल माने गऐ हैं। ध्रुपद के गायक का कंठ स्थिर रहता है अर्थात् गायन के समय उसके कण्ठ में कम्पन नहीं होता। अष्टछाप कीर्तनकार गिरिराज गोवर्धन के प्राकृतिक स्थलों पर रह कर संस्कृत निष्ठ ब्रजभाषा में शृंगार भक्ति की रचनाएँ कर श्रीनाथ जी के सम्मुख गायन किया करते थे।[१००]

पंडित भाव भट्ट ने ध्रुपद की व्याख्या में कहा है: 'जिसमें गीर्वाण और मध्य प्रदेश की भाषा का साहित्य हो, दो चार वाक्य हों, नरनारी की कथा हो, शृंगार रस भाव हो, पादान्तानुप्रासा तथा पादांत यमक युक्त चार पाद और उद्ग्राह, ध्रुव सहित उत्तम आभोग भी हों उसे ध्रुपद कहते हैं।'[१०१] लेखक के अनुसार उपर्युक्त व्याख्या का पालन अधिकांश पुष्टिमार्गीय संगीत में ही दृष्टिगत होता है। जिनमें गीर्वाण (संस्कृत) तथा ब्रजभाषा (हिन्दी की बोली) का साहित्य, नर (कृष्ण) नारी (गोपी) की कथा, शृंगार भाव, अनुप्रास, चार पाद और उत्तम आभोग सहित की सैंकड़ों रचनाएँ प्राप्त होती हैं।

ध्रुपद गान में स्थायी, अंतरा, संचारी तथा आभोग इस प्रकार के चार भेद होते हैं। ध्रुपद शैली का गायन चौताल, सूल ताल, धमार, आड चौताल, चर्चरी,

तीव्रा आदि ताल इत्यादि तालों में गाया जाता है।[१०२] वार्ता से ज्ञात होता है कि तानसेन, अकबर, मानसिंह आदि उस समय के सभी ध्रुपद शैली के संगीतज्ञ अष्टछाप के महानुभावों से निकट सम्पर्क रखते थे। वे सब अष्टछाप की गायन कला के प्रशंसक भी थे। इसमें भी यही समझा जा सकता है कि अष्टछाप की गायन कला भी ध्रुपद शैली की ही होगी।

ध्रुपद गायन की शुद्ध परम्परा को आज भी पुष्टि सम्प्रदाय के मंदिरों में जीवित देखा जा सकता है। पुष्टि सम्प्रदाय में आज भी हजारों की संख्या के ये पद साहित्य कीर्तन गान के रूप में देखे व सुने जा सकते हैं ।

२. हवेली संगीत –

पुष्टिमार्ग के प्रारम्भ के साथ भारतीय संगीत परम्परा के क्षेत्र में एक नवीन विधा का आरम्भ हुआ, जिसे कालान्तर में हवेली संगीत नाम दिया गया।

मुगल काल में औरंगजेब के अत्याचारों से तंग आकर विट्ठलनाथ जी ने वैष्णवों के घरों में श्री कृष्ण के बाल स्वरूप को पधरा कर हर घर को मंदिर बना दिया था। यह कार्य बड़े–बड़े भवनों से आरम्भ हुआ था जो उस समय हवेली के नाम से जाने जाते थे। आज भी पुष्टि सम्प्रदाय की प्रधान पीठ श्री नाथद्वारा के मंदिर की बनावट सामान्य मंदिर नुमा न होकर हवेलीनुमान ही है। अतः हवेली में बिराजमान प्रभु श्री नाथ जी के सम्मुख गाया जानेवाला शास्त्र सम्मत संगीत 'हवेली संगीत' के नाम से भी जाना जाता है। हवेली संगीत का आरम्भ ब्रज मण्डल से हुआ था।

वल्लभ सम्प्रदाय के मंदिरों में यशोदोत्संग ललित श्री कृष्ण की सेवा होती है। वहाँ गृह सेवा का एक विशिष्ट प्रकार प्रचलित होने से उस संस्थान को सार्वजनिक रूप न देकर हवेली की संज्ञा दी गई है। इन हवेलिओं में विराजमान भगवत् स्वरूप सन्मुख प्रातः काल में मंगला से लेकर सायंकाल में शयन पर्यन्त के आठ समय के दर्शनों में एवं ऋतु अनुसार विविध उत्सवों के उपलक्ष्य में विविध

भारतीय वाद्यों के साथ शुद्ध शास्त्रीय रागों में जो संगीत होता है उसी को अष्टछाप संगीत किंवा हवेली संगीत कहते हैं।[१०३]

अष्टछाप कवियों द्वारा रचित संगीत या कीर्तन वल्लभ सम्प्रदाय में हवेली संगीत के नाम से विख्यात है।

पुष्टिमार्गीय कीर्तन संगीत को हवेली संगीत कहने का रिवाज अन्तिम ५० वर्षो से ही प्रचार में आने लगा। सौराष्ट्र में पुष्टिमार्गीय मंदिर को वर्षों से हवेली कहने का रिवाज है। इस शब्द के प्रचार से धीरे–धीरे पुष्टिमार्ग के सभी मंदिरों के लिये यह (हवेली) शब्द पर्यायवाची बन गया। अन्य मंदिरों जैसे पुष्टिमार्गीय मंदिरों को घुम्मट या शिखरबंध बनाये नहीं जाते। किन्तु श्रीमंतों की हवेलियों की तरह उसकी रचना होने से हवेली और हवेली में गाये जाने वाले अष्टछापीय कीर्तन संगीत को हवेली संगीत कहना सुसंगत होगा। पुष्टि सम्प्रदाय का सर्व प्रथम बना हुआ गोवर्धन पर्वत का मंदिर था जिसमें श्री नाथ जी की सेवा का आरम्भ हुआ था। इस सर्व प्रथम मंदिर से लेकर आज तक के सभी मंदिर हवेलियों से मिलते जुलते बने हुए हैं।

विद्वानों का कथन है पुष्टि सृष्टि में हवेली संगीत विद्या को स्वीकार कर जीवन के साथ गायन विद्या का सम्बन्ध गहन से गहनतर बनाया है। सादगी से आरम्भ हवेली संगीत कीर्तन परम्परा ने आज तो विश्व व्यापी ख्याति अर्जित की है। इसको आगे बढ़ाने वालों पर और सुनने वालों पर चमत्कारिक प्रभाव पड़ता है। वे अनित्यता, चिन्ता तथा भौतिक एवं शारीरिक सुख की मिथ्या लालसा से मुक्त हो मुक्ति पथ का पथिक बनते हैं। वही पाता है चिरन्तर सत्य का आनंद। जिस प्रकार ब्रज में कृष्ण की बांसुरी की धुन पर ब्रज बाल और ब्रज बालाएँ भाव विभोर हो सुध–बुध खोते थे। वही स्थिति हवेली संगीत सुननेवाले भावुक वैष्णव जनों की हो जाती है। जिसको भी कीर्तन गान सुनने, सुनाने और गाने की लौ लग जाती है वह उसी में जीवन की सार्थकता समझ लेता है। इससे ही समझना चाहिए हवेली संगीत का जीवन पर पड़ा हुआ प्रभाव है।

हवेली संगीत परम्परा के संस्थापक वल्लभाचार्य और विकासक विट्ठलनाथ जी हैं। आज भी लगभग ५०० साल बाद भी यह परम्परा पुष्टिमार्गीय मंदिरों में यथावत् रूप से चल रही है। यही इसकी महत्ता है जिसने आज इस हवेली संगीत को विश्वव्यापी बनाया है। नाथद्वारा के पुरुषोत्तम दास पखवाली जी का हवेली संगीत को विश्व भर में ख्याति दिलाने में महत्वपूर्ण योगदान रहा है। पुरुषोत्तम दास जी के इस योगदान के फल स्वरूप भारत सरकार ने इन्हें पद्मश्री पुरस्कार से अलंकृत किया था।

आज उत्तर प्रदेश में हवेली संगीत की प्रणाली में बहुत कुछ परिवर्तन देखे जा सकते हैं। विशेषतः रागों के स्वरूप में मुगल शैली के प्रभाव से जो परिवर्तन हुए वे उत्तर प्रदेश की वर्तमान प्रचलित शैली में स्पष्ट झलकते हैं किन्तु नाथद्वारा की हवेली संगीत की परम्परा आज भी अक्षुण्ण बनी हुई है।[१०४]

९. पुष्टिमार्ग के अन्य कीर्तनकार भक्त ::

विद्वानों के मतानुसार विट्ठलनाथ जी द्वारा अष्टछाप की स्थापना एक युगान्तकारी घटना थी जिसमें आठ में से तीन महानुभावों को वाग्गेयकर का सर्वोच्च स्थान प्राप्त है ये भक्त कवि हैं – सूरदास, परमानंद दास और गोविन्द स्वामी। इस समय में और भी बहुत से भक्त कवि हुए जिन्होंने श्री नाथ जी के सम्मुख कीर्तन गान करने का गौरव प्राप्त किया। ये भक्त कवि थे – गदाधर मिश्र, पद्नाभ दास, कटहरिया, कान्ह दास, कृष्ण जीवन, हृषिकेश, गोपाल दास, गंगाबाई, चतुर बिहारी, जग जीवन, जगन्नाथ कविराय, तुलसीदास, जलधरिया थिरदास, तानसेन, धौंधी, राजा आसकरण, पर्वन सेन राजा, माणिकचंद, माधव दास, मुरारी दास, मेहा, राम दास, वृन्दावन, व्यास जी, श्याम दास, सगुणदास, हरजीवन, त्रिलोक, रामराय, भगवानहित, यादवेन्द्र, कृष्णा, ग़रीब दास, हरि नारायण, श्याम दास, अग्र स्वामी, खेम कवि, धीरज, श्री पति, विचित्र बिहारी,

अलीखान पठान, रसखान, ताज बीबी, नागरीदास हरि दास आदि के नाम उल्लेखनीय हैं।[१०५]

इनके अलावा गुसाँई जी के चतुर्थ पुत्र गोकुलनाथ जी, पंचम पुत्र रघुनाथ जी, सप्तम पुत्र घनश्याम जी, प्रपौत्र हरिराय महाप्रभु, द्वारकेश जी, कल्याण राय जी, ब्रजभूषण जी आदि गोस्वामी महानुभावों ने भी उत्कृष्ट काव्य रचनाएँ की हैं।

इनमें से कई भक्त कवियों के पद गान आज भी श्रीनाथ जी की सेवा में कीर्तन गान में गाए जाते हैं। इन भक्त कवियों में हिन्दू ही नहीं, मुसलमान समुदाय के भी भक्त थे जिन्होंने अपनी आत्मा को, मन को श्री नाथ जी के चरणों में अर्पित कर दिया और पुष्टिमार्गीय संगीत कीर्तन में सदा–सदा के लिए अमर हो गए।

विट्ठलनाथ जी ने एक बार छप्पन भोग का मनोरथ किया था, जिसमें सभी सम्प्रदाय के भक्तों को आमंत्रित किया था तथा उन भक्तों ने भी श्री नाथ जी के सम्मुख कीर्तन किया था। कहा जाता है तभी से वल्लभ सम्प्रदायी मंदिरों में चारों सम्प्रदाय के (पुष्टि, राधा वल्लभीय, हरिदासी तथा गौड़ीय) भक्तों द्वारा रचित पदों के गान की प्रथा चली थी। इन पद गानों में युगल–लीला के पदों का विशेष समावेश है।[१०६]

विद्वानों का मत है कि जिस अवसर के लिए जिस राग में जो पद गाया जाता था उसका उल्लेख भी लिखिया कर देता था। यही कारण है कि पुष्टिमार्ग का कीर्तन साहित्य इतना विशाल है और ऐसा सुव्यवस्थित रूप में प्राप्त होता है। अतः हम कह सकते हैं कि वल्लभाचार्य और विट्ठलनाथ जी ने अपने युग के लौकिक दरबारी संगीत को आमोद–प्रमोद के वैभव विलास से निकाल कर आध्यात्मिकता की और मोड़ दिया। और इस प्रकार संगीत के गायन – वादन के क्षेत्र में अपना अपूर्व योगदान दिया। जिसने हिन्दू जीवन को संगीत के माध्यम से भक्ति की एक नई राह दिखाई। इस संगीत धारा के प्रवाह में उस समय के सभी वैष्णव सम्प्रदायों के कृष्ण भक्तों ने अपना पूर्ण सहयोग प्रदान किया।

विद्वानों का मत है कि आज मंदिरों में कीर्तन गान एक औपचारिकता और जड़ नियम का पालन मात्र होकर रह गया है। मंदिरों में अच्छे जानकार कीर्तनियों का अभाव होता जा रहा है। इस प्रकार देखें तो लगता है कि पुष्टिमार्ग की कीर्तन गान परम्परा उत्थान–पतन के विविध सोपानों से होती हुई आज वास्तविकता की भीषण आग में लुप्त सी होती जा रही है।

१०. कृष्ण भक्ति काव्य साहित्य में कीर्तन संगीत का स्थान ::

भारतीय इतिहास की यह अनूठी विशेषता है कि उसमें समय–समय पर होनेवाली धार्मिक हलचलों का प्रभाव प्रायः सारे देश पर पड़ा है। भक्ति काल में अनेक प्रतिभाशाली कलाकारों ने हिन्दी काव्य को अलंकृत कर समृद्ध किया। इनमें कृष्ण भक्ति काव्य साहित्य का विशेष प्रचार हुआ। कृष्ण के जिस मधुर रूप को लेकर ये भक्त कवि चले थे वह प्रेम के अनन्त सौन्दर्य का समुद्र था। जिसने मानव जीवन का प्रवाह श्री कृष्ण प्रेम की और मोड़ दिया।

इन सभी भक्त कवियों की वाणी 'स्वान्तः सुखाय' थी। ये अपने ही रंग में मस्त रहने वाले थे। एक विद्वान का मत है कि 'अष्टछाप संगीतकारों की ध्रुपद धमार शैली द्वारा की गई भारतीय संगीत सेवा को क्या कभी भुलाया जा सकेगा और संस्कृत ध्रुपद ने लौकिक भाषा ब्रज में कवित्त छन्द का प्रणयन कर साहित्य क्षेत्र में अपूर्व क्रान्ति की है।'[१०७] डॉ. सावित्री सिन्हा के ये शब्द यथार्थ ही हैं 'ब्रज भाषा के कृष्ण भक्ति साहित्य का इतिहास लगभग साढ़े तीन सौ वर्ष का दीर्घ इतिहास है, आश्चर्य की बात है उसके प्रवर्तन तथा समापन दोनों का श्रेय मुख्य रूप से वल्लभाचार्य के पुष्टिमार्ग में दीक्षित महानुभावों (सूरदास तथा भारतेन्दु हरिशचन्द्र) को जाता है।'[१०८]

इस समय में रचित भक्ति काव्य साहित्य ने हिन्दी साहित्य को भी अत्यन्त समृद्ध किया। भक्ति काल के इस कृष्ण साहित्य में भारतीय संस्कृति का जैसा दर्शन देखने को मिलता है वैसा हिन्दी साहित्य में अन्यत्र देखने को नहीं मिलता

है। इस साहित्य में सगुण–निर्गुण भक्ति, हिन्दू–मुस्लिम एकता, आध्यात्मिक आदर्श, सामाजिक एवम् राजनैतिक जीवन तथा सभी कलाओं मुख्यतः संगीत कला का चरमोत्कर्ष देखा जा सकता है। भाषा की दृष्टि से भी ब्रज, अवधी जैसी बोलचाल की भाषाओं को साहित्यिक स्वरूप देने का बेजोड़ कार्य इन भक्त कवियों ने किया है। वैष्णव गीति काव्य का शास्त्रीय संगीत के रूप में चरमोत्कर्ष भी इसी कालावधि में हुआ था। यही वह समय है जिसमें गिरिराज गोवर्धन पर स्थित श्रीनाथ जी के मंदिर में बहु संख्यक राग–रागिनियों में निबद्ध उन सहस्त्रों सरस पदों की दिव्य स्वर लहरियों का गूँजन होता रहा था जिन्होनें ब्रज भाषा हिन्दी के गेय काव्य को अमर बना दिया। इस प्रकार देखें तो लगभग १७० वर्षों के समय का इतिहास अष्टछापी गायन के उदय तथा विकास का साक्षी रहा है।[१०९] कीर्तन द्वारा भक्ति मग्न होकर मुक्ति पाने वालों में चैतन्य महाप्रभु, अष्टछाप महानुभव, स्वामी हरिदास, हित हरिवंश आदि के नाम उल्लेखनीय हैं।

यूँ तो आज भी संगीत भगवत् उपासना का आवश्यक माध्यम बना हुआ है। मंदिरों, पूजाघरों, देवालयों आदि सभी मांगलिक पूजनीय स्थानों पर हमें संगीत में बद्ध मंत्रों का स्वर सुनाई दे जाता है। अतः हम कह सकते हैं कि कुछ हद तक प्रवर्तन तथा समापन के लिए ही नहीं, अपितु कृष्ण काव्य के अमूल्य साहित्य के लिए भी हिन्दी साहित्य सदैव पुष्टिमार्ग का ऋणी रहेगा।

११. पुष्टिमार्गीय कीर्तन की मुख्य पुस्तकें तथा उनका विवरण ::

आज पुष्टिमार्गीय मंदिरों में गाये जाने वाले कीर्तन पद गान की पुस्तकें चार भागों में देखी जा सकती हैं। जिनमें नित्य सेवा के पद, वर्षोत्सव सेवा के पद, पर्वों–त्यौहारों के पद, प्रकृति सौंदर्य के पद, विनय के पद, गुरु महिमा के पद, वात्सल्य के पद तथा अन्य अनेक लीलात्मक भावना के पद गान देखने को मिलते हैं –

पुष्टिमार्गीय कीर्तन संग्रह की मुख्य पुस्तकें :[११०]

१. वर्षोत्सव के पद (भाग – १)
जन्माष्टमी से रास पर्यन्त

२. वर्षोत्सव के पद (भाग – २)
धनतेरस से राखी पर्यन्त

३. नित्य के पद (भाग – ३)

४. बसन्त, धमार, होली, रसिया के पद (भाग – ४)

१. प्रथम भाग में हमें मुख्यतः निम्न लिखित त्यौहारों के कीर्तन के पद मिलते हैं –

जन्माष्टमी की बधाई के पद,

माहात्म्य के पद,

नाल छेदन के पद,

छठी के पद,

पूतना वध के पद,

पलना के पद, चंदन के पलना के पद, – फूल के पलना के पद,

कुल्हे के पद,

जोगी लीला के पद,

ढाढी के पद,

दसोंधि के पद,

मास दिन के चौक के पद,

करवट के पद,

नामकरने के पद,

कान छेदन के पद,

अन्न प्राशन के पद,

मृतिका भक्षण के पद,

ऊखल के पद,

बाल लीला के पद,

शकटासुर वध लीला के पद,

तृणावर्त वध लीला के पद,

दावानल पान लीला के पद,

कालिया दमन लीला के पद,

श्री चंद्रवली जी की बधाई,

श्री ललिता जी की बधाई,

श्री बलदेव जी की बधाई के पद,

विशाख जी की बधाई के पद,

श्री राधा जी की बधाई के पद,

श्री राधा जी के पलना के पद,

श्री राधा जी के ढाढी के पद,

श्री राधा जी के बाल लीला के पद,

श्री नवनागरी के पद,

श्री वामन जयंती के पद,

दान के पद,

दान लीला के पद,

दान के दिनन में मान के पद,

सांझी के पद, – कोट की आरती के पद,

मुरली के पद,

श्री रामचन्द्र जी के करखा के पद,

नव विलास के पद,

दश उल्लास के पद,

देवी पूजन के पद,

दशहरा के पद – भोग सरायवे के पद,

दशहरा मान के पद, दशहरा दूसरा दिन मंगला के पद, रास के पद,

इन कीर्तन पदों में गाए जाने वाले मुख्य राग – रागिनियाँ –

देवगंधार, भैरव, रामकली, बिलावल, आसावरी, धनाश्री, जेतश्री, सारंग, नट, मल्हार, काफी, देश, गोरी, जैजैवंती, राइसो, कान्हरो, नाइकी (नायकी), बिहाग,

पूर्वी, मारु, ललित, मालकौस, विभास, टोडी, परज, ईमन, सूहा, केदारो, खट, गौड सारंग, खमाज, कल्याण, पीलु, श्याम कल्याण, अडानौ, बिहागरो, सोरठ, हमीर, जंगलो, श्री, नूर सारंग, श्री राग।

कीर्तन पदों के मुख्य कवियों के नाम –

सूरदास, परमानंद दास, नंद दास, चतुर्भुज दास, गोविंद दास, कृष्ण दास, कुम्भन दास, छीत स्वामि, श्री विट्ठलगिरिधर, माधो दास, द्वारकेश, हित हरिवंश, राजा आसकरन, रसिक प्रीतम, कल्याण के प्रभु, चतुर बिहारी, गरीब दास, दास गोपाल, कटहरिया, घोंघी, गंग ग्वाल, मानिकचंद्र, हरि नारायण स्यामदास, गदाघर दास, तानसेन, जयदेव, सगुणदास, कृष्ण जीवन लछीराम, रसखान, हरि दास, श्री भट्ट, जन भगवान, मुरारी दास, जगजीवन, जन त्रिलोक, नागरी दास, जन हरिया, राम दास, रघुनाथ दास, रामराय, ब्रजपति, ब्रजाधीश, दामोदर हित, मान दास, व्यासजी, श्याम दास, ब्रजजन, आनंद घन, सरस रंग, रामकृष्ण, रघुवीर, निजजन, सूरदास मदनमोहन, सुजान, नारायण, मदन मोहन, यदुनाथ दास, विट्ठल दास, केसौ दास, जगन्नाथ कविराय, अग्र दास।

२. द्वितीय भाग के कीर्तन में धन तेरस से राखी पर्यन्त के वर्षोत्सव के कीर्तन के पद देखने को मिलते हैं –

धन तेरस के पद,

चतुर्दशी – अभ्यंग के पद,

दिवारी के पद,

गाय खिलायवे के पद (भोग आरती में)

गाय को कान जगायवें के पद,

दीप मालिका के पद,

हाटरी में आरती के पद,

पासा खेल के पद,

दीवारी के पोढवें के पद,

गोवर्धन लीला (सरस लीला) के पद,

गोवर्धन लीला अन्नकूट के पद,

गोवर्धन पूजा के पद,

श्री गिरिराज जी के पद,

अन्नकूट भोग आयवें के पद,

अन्नकूट भोग सरायवें के पद, अन्नकूट आरती तथा इन्द्रमान भंगके पद,

इन्द्रमान भंग के पद,

गिरिराज जी नेच पधरायवे के पद,

भाई दूज के पद, (तिलक के और राज भोग आयवे के पद)

गोपाष्टमी के पद,

देव दीवाली देव प्रबोधिनी के पद,

देव जगायवे के पद, (देवोत्थापन)

ब्याह के और शेहरा के पद,

शेहरा के पद,

श्री गुसाँई जी की बधाई के पद,

नामरत्न नी बधाई

श्री गुसाँई जी पलना के पद,

श्री गुसाँई जी के विवांह के पद,

सात बालकन की बधाई के पद,

१. श्री गिरिधर जी की बधाई के पद,

२. श्री गोविदराय जी की बधाई के पद,

३. श्री बालकृष्ण जी की बधाई के पद,

४. श्री गोकुलनाथ जी की बधाई के पद,

श्री गुसाँई जी के सात लालजी जी की बधाई –

माला तिलक प्रसंग –

श्री गोकुलनाथ जी पलना के पद,

श्री गोकुलनाथ जी के बाललीला के पद,

५. श्री रघुनाथ जी की बधाई के पद,

६. श्री यदुनाथ जी की बधाई के पद,

७. श्री घनश्याम जी की बधाई के पद,

(वल्लभाचार्य के पुत्र) श्री गोपीनाथ जी की बधाई के पद,

श्री पुरुषोत्तम जी (गोपीनाथ जी के पुत्र) की बधाई,

श्री हरिराय जी की बधाई,

भोगी संक्रांति के पद,

मकर संक्रांति के पद,

मकर संक्रांति भोजन के पद – पतंग के पद,

श्री दामोदर दास हरसानी जी की बधाई,

द्वितीय पाटोत्सव के पद, (डोल उत्सव के दूसरे दिन)

संवत्सर उत्सव के पद,

गनगौर के पद – गनगौर के दिन छाक के पद,

श्री यमुना जी की बधाई के पद,

श्री रामनवमी जी की बधाई के पद, रामनवमी के पलना के पद,

श्री राम के बाल लीला के पद,

श्री राम के ढाढी के पद, चोकडा,

श्री महाप्रभुजी की बधाई

श्री आचार्य जी के पलना के पद,

श्री आचार्य जी के बाललीला के पद,

श्री महाप्रभु जी के विवाह खेल के पद,

स्नान यात्रा के पद,

श्री महाप्रभु जी की ढाढी लीला के पद,

श्री नृसिंह जी के पद,

गंगा दसमी के पद,

स्नान यात्रा के पद,

खंडिता के पद,

रथयात्रा के पद,

रथ में पधारें तब मल्हार की अल्पचारी

रथ के पद – भोग आवे के पद, – दूसरे दिन मंगला के पद,
रथ में से उतरने के पद,
रथयात्रा के पद,
मल्हार जगायवे के पद,
मल्हार कलेऊ के पद,
मल्हार मंगला दरशन.
मल्हार के पद,
मल्हार (अभ्यंग) के पद,
मल्हार शृंगार दर्शन के पद,
मल्हार कसुंबी छठ और लाल घटा के पद,
मल्हार श्याम घटा के पद,
मल्हार जाम्बली घटा के पद,
मल्हार गुलाबी घटा के पद,
मल्हार हरी घटा के पद,
मल्हार पीरी घटा के पद,
मल्हार मुगट के पद,
मल्हार टिपारा के पद,
मल्हार सेहरा के पद,
मल्हार चंद्रिका के पद,
मल्हार ग्वाल पगा के पद,
मल्हार चूनरी के पद,
मल्हार लहेरियों के पद,
मल्हार कुल्हे के पद,
मल्हार छाक के पद,
मल्हार भोग सरवे के पद,
मल्हार बीरी खवाय के पद,
मल्हार राजभोग दर्शन के पद,
मल्हार संध्या आरती के पद,

मल्हार यारु के पद,

मल्हार दूध के पद,

मल्हार शयन दर्शन के पद,

मल्हार मान के पद,

मल्हार पोढ़ायवे के पद,

हिंडोरा अधिवासन के पद,

हिंडोरा चंदन के पद,

हिंडोरा मंगला दर्शन के पद,

हिंडोरा शृंगार दर्शन कें पद,

हिंडोरा मुकुट के पद,

शरद के हिंडोरा,

हिंडोरा के पद (टीपारी),

हिंडोरा के पद शेहरा,

हिंडोरा द्रुमालो के पद,

हिंडोरा कूल्हे के पद,

हिंडोरा फेंटा के पद,

हिंडोरा कुसुम्बी घटा क़े पद,

हिंडोरा श्याम घटा के पद, हिंडोरा गुलाबी घटा के पद,

केसर के हिंडोरा –

हिंडोरा हरि घटा के पद,

हिंडोरा जाम्बली घटा के पद,

हिंडोरा चुनरी के पद,

हिंडोरा लहेरिया के पद,

फूल के हिंडोरा,

मचकी और फल – फूल हिंडोरो के पद,

श्री गिरिराज ऊपर के हिंडोरना,

श्री यमुना पुलिन हिंडोरा,

कांच के हिंडोरा,

सोने के हिंडोरा के पद,

सखी भेष के हिंडोरा,

चोकडा – हिंडोरे के पद, ठकुरानी तीज – हिंडोरा के पद,

नाग पंचमी के पद – हिंडोरना के,

हिंडोला – बगीचा के पद,

बगीचा के हिंडोरा दर्शन,

पीछे भीतर हिंडोरा में झूले तब,

राखी के हिंडोरा के पद,

पवित्रा के हिंडोरा के पद,

श्री गुसाँई जी के हिंडोरा,

हिंडोरा मल्हार के पद,

हिंडोरा के पद–राग–नट, मालव, गोरी,मारु, सोरठ, काफी, कल्याण, ईमन, अडानो, कान्हरो, केदारो, जंगलो, बिहाग, सारंग, पीलू

हिंडोरा झूलि उतरवे के पद,

पवित्रा धरायवे के पद,

श्री आचार्य जी के पवित्रा घरायवे के पद,

राखी के पद,

छप्पन भोग के पद,

श्री गुसाँई जी के विवाह के पद,

मान सागर के पद,

उपरोक्त पदों में प्रयुक्त राग–रागिनियाँ –

देवगंधार, भैरव, रामकली, बिलावल, आसावरी, धनाश्री, जेतश्री, सारंग, नट, मल्हार, काफी, गौरी, जैजैवंती, राइसो, कान्हरो, नाइकी (नायकी), बिहाग, पूर्वी, मारु, ललित, मालकौस, टोडी, परज, ईमन, सूहा, केदारो, खट, गौड सारंग, खमाच, कल्याण, अडानौ, बिहागरो, सोरठ, हमीर, जंगलो, श्री, नूर सारंग, झीझंटी, खमायची, मालव

विभास, बिलावर चोखंडो, आसावरी चोखंडो, हमीर कल्याण, राग पंचम, मधुमती सारंग, होरी, मेघ मल्हार, बसंत, सुघराई सोहनी, माला, भीम पलासी, मिश्र पिलू।

कीर्तन पदों के मुख्य कवियों के नाम –

विष्णुदास, जदुनाथ दास, सूर दास, परमानंद दास, नंद दास, चतुर्भुज दास, गोविंद दास, विचित्र बिहारी, कृष्ण दास, कुम्भन दास, छीत स्वामी, श्री विट्ठलगिरिधर, माधो दास, द्वारकेश, केशव किशोर, हित हरिवंश, राजा आसकरन, रसिक प्रीतम, कल्याण के प्रभु, चतुर बिहारी, अलीखान, दयाल, मुकुन्ददास, सगुण दास, ब्रह्म दास, तुलसी दास, गोपाल दास, अग्र दास, श्री भट्ट, ब्रजपति, ब्रजाधीश, मान दास, व्यासजी, गिरिधर दास, हरिदास स्वामी, रामदास, पद्मनाभदास, मानिकचंद, तानसेन, सुघर राय, सेठ पुरुषोत्तम, ऋषीकेश, जगन्नाथ, कविराय, मुरारी दास, हरिनारायण स्यामदास, केसो दास, हर जीवन दास, जन भगवान, जयदेव, गदाधरदास।

३. पुष्टिमार्गीय कीर्तन के तृतीय भाग में नित्य के पद आते हैं –

अथ श्री आचार्य जी महाप्रभु जी के पद,
श्री गुसाँई जी के पद,
गोकुलनाथ जी के पद,
श्री यमुना जी के पद,
जगायेव जी के पद,
कलेऊ जी के पद,
व्रतचर्या जी के पद,
शीतकाल खंडिता जी के पद, (मंगला श्रृंगार)
अभ्यंत और श्रृंगार दर्शन के पद, (श्रृंगार से शयन तक)
कुल्हे जी के पद,
कुल्हे टिपारों,
पगा के पद,
फेटा श्रृंगार,
दुमाला,

घटा के पद, (शृंगार)

शीतकाल के शृंगार के पद,

शीतकाल के भोजन बुलायवे के पद,

शीतकाल के भोजन के पद,

शीतकाल के श्री ब्रज भक्तन के भोजन के पद,

भोग सरायवे के पद,

बीरी के पद,

हिलग के पद, (शीतकाल राजभोग दर्शन में)

शीतकला भोग समय के पद,

संध्या आरती के पद–गाय बुलायवे के पद,

आवनी के पद,

शयन दर्शन के पद,

मान के पद,

उत्तर नंदेत मोरली

पोढवे के पद,

मंगला आरती के पद, (उष्णकाल)

मंगला दर्शन के पद,

खंडिता के पद,

अभ्यंग के पद,

उष्णकाल– शृंगार के पद, (शृंगार धरायवे के और दर्शन के पद)

अथ शृंगार सन्मुख के पद,

खसखसाने के पद,

शृंगार दर्शन के पद, (पगा शृंगार के पद, सुबह से शाम तक)

कुल्हे के पद,

पाग चंद्रिका,

टोपी,

टोपारो के पद,

मुगट शृंगार के पद,

किरीट मुगट के पद,

दुमाला श्रृंगार के पद,

दधि मंथन के पद,

माखन चोरी के पद,

गोदोहन के पद,

ग्वाल के पद,

उराहने के पद,

घैया के पद,

बलदेव जी के पद,

नित्य छाक के पद,

फ़ल फलारी के पद,

कुंज भोजन के पद,

उसीर छाक के पद,

नाव के छाक के पद,

उष्णकाल भोग सरायवे के पद,

उसीर बीरी के पद,

राजभोग आरती के पद,

राग माला के पद,

पलकन भावना के प़द,

राजभोग दर्शन के पद, राजभोग कुंज के पद,

मानकुंज के पद,

अक्षय तृतीया के पद,

कलेऊ के पद,

चंदन के पद,

खसखाने के पद,

नाव के पद,

उष्णकाल परदनी, फूल मंडली के पद,

फूल श्रृंगार,

मान सागर के पद,

अष्ट सखिन के भावसो–फूलन के आठ श्रृंगार के पद,

फूल की पाग के पद,

फूल की श्रृंगार धरे जब के पद,

पिछोरा (फूल के श्रृंगार)

फूल की सेहरा के पद,

फूल का मुगट,

टिपारो,

पनघट के पद,

उत्थापन के पद,

भोग दर्शन के पद, (शाम के),

उसीर भोग दर्शन के पद,

संध्या आरती के पद,

आवनी के पद,

उसीर आवनी के पद,

अथ श्रृंगार बड़े करवे के पद,

अथ मिस के पद,

चंद्र प्रकाश के पद,

सांझ समय घैया के पद,

व्यारु के पद,

उसीर व्यारु के पद,

दूध के पद,

उसीर दूध के पद,

बीरी के पद,

शयन दर्शन के पद, (उष्णकाल)

कुंज शयन दर्शन के पद,

उसीर शयन दर्शन के पद,

अथ मान के पद,

मान छूटवे के पद,

मान मिलाप के पद,

पोंढवे के पद,

उसीर पोंढवे के पद,

कहानी के पद,

विनती के पद,

वैष्णवन के नित्य नेमं के पद,

वैराग्य के पद,

अथ माहात्म्य के पद,

आश्रय के पद,

अथ मान सागर के पद,

उपरोक्त पदों में प्रयुक्त राग – रागिनियाँ –

देवगंधार, भैरव, रामकली, बिलावल, आसावरी, धनाश्री, जेतश्री, बिभास, सारंग, नट, मल्हार, काफी, देश,गोरी,कान्हरो, नाइकी (नायकी), बिहाग, पूर्वी, ललित, मालकौस, टोडी; ईमन, केदारो, खट, खमाज, कल्याण, अडानौ, बिहागरो, सोरठ, हमीर, पंचम, टिपारो, हमीर–कल्याण।

कीर्तन पदों के मुख्य कवियों के नाम –

सूर दास, परमानंद दास, नंद दास, चतुर्भुज दास, गोविंद दास, कृष्ण दास, कुम्भन दास, छीत स्वामी, श्री विट्ठलगिरिधर, माधो दास, द्वारकेश, पद्मनाभ दास, हित हरिवंश, राजा आसकरन, रसिक प्रीतम, कल्याण के प्रभु, चतुर बिहारी, रघुनाथ दास, दास गोपाल, कटहरिया, घोंघी, कृष्ण जीवन लछीराम, गदाधर दास, हरिदास स्वामी, श्री भट्ट, ब्रजपति, ब्रजाधीश, मान दास, व्यासजी, जन त्रिलोक, जग जीवन, मुरारीदास, अग्रदास, गिरधर दास, किशोरीदास, जन कल्याण, हरिनारायण स्यामदास, सुघर राय, तानसेन, जगन्नाथ कविराय, केसोदास, विष्णुदास, विचित्र बिहारी, ब्रह्मदास, जन भगवान, ऋषिकेश, दयाल, जयदेव, सगुण दास, सेठ पुरुषोत्तम।

४. पुष्टिमार्गीय कीर्तन संग्रह के चतुर्थ भगा में बसन्त, धमार, होली, रसिया के पद आते हैं –

बसंत बहार के पद,

श्री दामोदर दास जी की बधाई (पोढवाने)

माला शयन दर्शन

श्री गुसाँई जी तथा श्री जयदेव जी की अष्टपदी,

बसंत पंचमी के पद,

बसंत जगायवे के पद,

बसंत कलेऊ के पद,

बसंत मंगला के पद,

बसंत पालने के पद,

राजभोग खेल के पद,

बसंत राजभोग खेल के पद, (शेहरा के पद)

संध्या आरती,

टिपारे के पद,

श्री गुसाँई खेल के पद,

बसंत के पद,

धमार होरी के पद, – (मंगला दर्शन)

धमार पांडे के पद,

होरी डांडा के पद,

गारी की धमार,

होली उत्सव के पद,

धमार के पद,

धमार फेंटा के पद,

धमार दुमाला के पद,

धमार कुल्हे के पद,

चुनरी के पद,

धमार शेहरा के पद,

धमार मुगट के पद,

धमार टीपारा के पद,

धमार के पद,

धमार के पद, (शिवरात्री के दिन)

धमार के पंथ जी लाल के पद,

वसंत धमार मान के पद,

वसंत धमार पौढवे के पद,

वसंत धमार आश्रय के पद,

वसंत धमार आशीष के पद,

डोल के पद,

डोल – आशीष के पद,

श्री गुसाँई भादो बसंत

शेहरा के पद,

डोल के पद,

होरी – रसिया के पद,

उपरोक्त पदो में प्रयुक्त राग – रागिनियाँ –

देवगंधार, भैरव, रामकली, बिलावल, आसावरी, धनाश्री, जेतश्री, बसंत, माला, हिंडोल, पंचम, सुघराई, घन्याश्री, सोरठ बिलावल, मरी, धमार, सोहनी, गोड–मल्हार, सिंघुडो, मालव, माल श्री, श्री हठी, भूपाली, रायसों, दरबारी, कान्हरो, होरी–काफि, सारंग, नट, काफी, गोरी, जैजैवंती, कान्हरो, नाइकी (नायकी), बिहाग, पूर्वी, मारु, ललित, मालकौस, विभास, टोडी, ईमन, केदारो, खट, गौड सारंग, कल्याण, अडानौ, बिहागरो, सोरठ, हमीर।

कीर्तन पदों के मुख्य कवियों के नाम –

सूर दास, परमानंद दास, नंद दास, चतुर्भुज दास, गोविंद दास, कृष्ण दास, कुम्भन दास, छीत स्वामी, माधो दास, द्वारकेश, हित हरिवंश, राजा आसकरन, रसिक प्रीतम, कल्याण के प्रभु, दास गोपाल, घोंघी, कृष्ण जीवन लछीराम,

रसखान, हरि दास, श्री भट्ट, राम दास, ब्रजपति, ब्रजाधीश, दामोदर हित, मान दास, व्यासजी, सुजान, नारायण, मदन मोहन, रघुनाथ दास, विष्णु दास, पर्वत सेन, मुरारी दास, जयदेव, हर जीवन, सुघर राय, अग्रदास, जन गोविंद, गोपाल, दास, पद्मनाभ दास, ऋषिकेश, गदाधर दास, जन त्रिलोक, माधुरी दास, जगन्नाथ कविराय, जन हरिया, सगुण दास, दयाल, विचित्र बिहारी, श्याम दास, रामराय।

पुष्टिमार्गीय कीर्तन संग्रह के चतुर्थ भाग से अष्टछाप और उनके अष्टांग कवियों के नाम की तालिका दी हुई है जो इस प्रकार है –[१११]

सूरदास	**परमानंद दास**
अलीखान	आशकरन
कृष्ण जीवन लछीराम	गदाधर दास
जगन्नाथ कविराय	गोपाल दास
जन भगवान	पद्मनाभ दास
तानसेन	मानिकचंद
मुकुन्द दास	रसिक बिहारी
मुरारी दास	सगुण दास
हरिनारायण स्यामदास	हर जीवन दास

कुम्भनदास	**कृष्णदास**
प्रभु मुकुन्द	चतुर बिहारी
किशोरी दास	गोपाल दास (दूसरे)
माधुरी दास	जग जीवन
रसखान	जन त्रिलोक
लघु गोपाल	दास माधव
कृष्ण दास	नागरी दास

हरि दास	राम राय
हित हरिवंश	रूप माधुरी
गोविन्द स्वामी	**छीत स्वामी**
कल्याण के प्रभु	अग्र स्वामी
रसिक दास (मट्टजी महाराज)	केशव किशोर
कृष्ण दास (दूसरे)	जन गिरिधर
द्वारकेश	भगवान दास
व्रज पति	माधुरी दास
व्रजाधीश	ऋषिकेश
हरीराय (रसिक)	श्याम दास
श्री विट्ठल गिरिधर जी (गंगा बाई)	सुधर राई
चतुर्भुज दास	**नंद दास**
दामोदर हित	कटहरिया
प्रेम प्रभु	ताज बीबी
विचित्र विहारी	कहे भगवान हित
बिहारी दास	जन हरिया
मान दास	धोंधी
व्यास जी स्वामी	राम दास
श्री भट्ट	रघुनाथ दास
कल्याण के प्रभु (जन कल्याण)	हरि दास स्वामी

नोट : इन कीर्तन कवियों का परिचय हमें ८४ और २५२ वैष्णवन की वार्ता से भी मिलता है।

******

:: संदर्भ सूची ::

SMT. HANSA MEHTA LIBRARY
The M. S. University of Baroda

१. श्रीमद् भागवत महापुराण (१०/२१/१५)
२. पुष्टि पाथेय (भारतीय संगीत – २३०)
लेखक : प. ओंकारनाथ जी ठाकुर
३, ४, हिन्दी के कृष्ण भक्ति कालीन साहित्य में संगीत – ५०
लेखिका : उषा गुप्ता
५. हिन्दी के कृष्ण भक्ति कालीन साहित्य में संगीत – ९२
लेखिका : उषा गुप्ता
६. हिन्दी के कृष्ण भक्ति कालीन साहित्य में संगीत – ६६,
लेखिका : उषा गुप्ता
७. हिन्दी के कृष्ण भक्ति कालीन साहित्य में संगीत – ९२, लेखिका : उषा गुप्ता
८. हिन्दी के कृष्ण भक्ति कालीन साहित्य में संगीत – ५१,५२, लेखिका : उषा गुप्ता
९. अष्टछापीय भक्ति संगीतः उद्भव और विकास–१, लेखक : चम्पकलाल छबीलदास नायक
१०. अष्टछाप परिचय – ३५१, लेखक : प्रभु दयाल मीत्तल
११. अष्टछापीय भक्ति संगीत : उद्भव और विकास–१,
लेखक : चम्पकलाल छबीलदास नायक
१२, १३, हिन्दी के कृष्ण भक्ति कालीन साहित्य में संगीत – ५१
लेखिका : उषा गुप्ता
१४. 'आहतोडनाहतश्चेति द्विघा नादो निगघते'
अष्टछापीय भक्ति संगीत : उद्भव और विकास (प्रास्ताविक)
लेखक : चम्पकलाल छबीलदास नायक
१५. अष्टछापीय भक्ति संगीत : उदभव और विकास (प्रास्ताविक)
लेखक : चम्पकलाल छबीलदास नायक
१६. हिन्दी के कृष्ण भक्ति कालीन साहित्य में संगीत–५४, लेखिका : उषा गुप्ता
१७. हिन्दी के कृष्ण भक्ति कालीन साहित्य में संगीत – ५५,
लेखिका : उषा गुप्ता
१८, १९, हिन्दी के कृष्ण भक्ति कालीन साहित्य में संगीत – ५८,
लेखिका : उषा गुप्ता
२०. हिन्दी के कृष्ण भक्ति कालीन साहित्य मे संगीत – ५९,
लेखिका : उषा गुप्ता
२१. हिन्दी के कृष्ण भक्ति कालीन साहित्य में संगीत – ५९
लेखिका : उषा गुप्ता
२२. हिन्दी के कृष्ण भक्ति कालीन साहित्य में संगीत – ६०

लेखिका : उषा गुप्ता
२३. हिन्दी के कृष्ण भक्ति कालीन साहित्य में संगीत – ६१
लेखिका : उषा गुप्ता
२४. हिन्दी के कृष्ण भक्ति कालीन साहित्य में संगीत – ६२
लेखिका : उषा गुप्ता
२५, २६, २७, हिन्दी के कृष्ण भक्ति कालीन साहित्य में संगीत – ६२
लेखिका : उषा गुप्ता
२८, २९, हिन्दी के कृष्ण भक्ति कालीन साहित्य में संगीत – ६३
लेखिका : उषा गुप्ता
३०. हिन्दी के कृष्ण भक्ति कालीन साहित्य में संगीत – ६३, लेखिका : उषा गुप्ता
३१. हिन्दी के कृष्ण भक्ति कालीन साहित्य में संगीत – १०२, लेखिका : उषा गुप्ता
३२. अष्टछापीय भक्ति संगीतः उदभव और विकास – १३
लेखक : चम्पकलाल छबीलदास नायक
३३. अष्टछापीय भक्ति संगीतः उदभव और विकास – १
लेखक : चम्पकलाल छबीलदास नायक
३४. हिन्दी के कृष्ण भक्ति कालीन साहित्य में संगीत – १०१
लेखिका : उषा गुप्ता
३५. श्रीमद् भागवत महापुराण (१/६/३९)
३६. श्रीमद् भागवत महापुराण (१०/३२/२)
३७. हिन्दी के कृष्ण भक्ति कालीन साहित्य में संगीत – १०३
लेखिका : उषा गुप्ता
३८. 'तस्य गीतस्य माहात्म्यं कः प्रशंसितुमीशते।
धर्मार्थकाम मोक्षाणा मिदमेवैकसाधनम्।।'
हिन्दी के कृष्ण भक्ति कालीन साहित्य में संगीत – १०१
लेखिका : उषा गुप्ता
३९. हिन्दी के कृष्ण भक्ति कालीन साहित्य में संगीत – ७६
लेखिका : उषा गुप्ता
४०. श्रीमद् भागवत महापुराण (१२/३/५१)
४१. अष्टछाप परिचय – ३५१, ३५२ लेखक : प्रभु दयाल मीत्तल
४२. हीरक जयन्ती ग्रंथ
(अष्टछाप संगीत एवं उसके वाध यंत्र – २०६) लेखक : विष्णुचन्द्र पाठक
४३. अष्टछाप और वल्लभ सम्प्रदाय – (।।) – (५६४ – ५६५)
लेखक : डॉ. दीन दयालु गुप्त

४४, ४५, अष्टछापीय भक्ति संगीत : उदभव और विकास – ५८ – ६१
लेखक : चम्पकलाल छबीलदास नायक

४६. हिन्दी साहित्य का इतिहास – ४४
लेखक : रामचंद्र शुक्ल

४७. हिन्दी के कृष्ण भक्ति कालीन साहित्य में संगीत – १०८ लेखिका : ऊषा गुप्ता

४८. हिन्दी के कृष्ण भक्ति कालीन साहित्य में संगीत – ४१
लेखिका : उषा गुप्ता

४९. हिन्दी साहित्य का बृहद इतिहास– (५) – २०४
नागरी प्रचारणी सभा

५०. अष्टछाप परिचय – ३५८, लेखक : प्रभु दयाल मीत्तल

५१. हिन्दी के कृष्ण भक्ति कालीन साहित्य में संगीत – २०४
लेखिका : उषा गुप्ता

५२. अष्टछापीय भक्ति संगीत : उद्‌भव और विकास – ९०
लेखक : चम्पकलाल छबीलदास नायक

५३. अष्टछापीय भक्ति संगीत : उद्‌भव और विकास – ९८
लेखक : चम्पकलाल छबीलदास नायक

५४. हिन्दी साहित्य का बृहद इतिहास – (५) – २७, नागरी प्रचारणी सभा

५५. + अष्टछाप और वल्लभ सम्प्रदाय – (१) – ५५ लेखक : डॉ. दीन दयालु गुप्त
+ अष्टछाप परिचय– ३५८, लेखक : प्रभुदयाल मीत्तल

५६. अष्टछाप और वल्लभ सम्प्रदाय – (१) – ५६
लेखक : डॉ. दीन दयालु गुप्त

५७. वल्लभाचार्य ने भगवद् सेवा में कीर्तन का महत्व बताते हुए कहा है–

'महत्ता कृपाया यावद् भगवान् दययिष्यति ।
तावदानंदसंदोहः कीर्त्यमानः सुखाय हि ॥
महतां कृपया यद्वत्कीतनं सुखदं सदा ।
न तथा लौकिकानां तु स्निग्धभोजन रूक्षवत् ॥
गुणगाने सुखावाप्तिगोविन्दस्य प्रजायते ।
यथा तथा शुकादीनां नैवात्मनि कुतो न्यतः ॥
तस्मात्सर्व परित्यिज्य निरूद्धैः सर्वदा गुणः ।
सदानंदपरेगैयाः सच्चिदानंदता ततः ॥'

अर्थात् अपने सुख के लिए आनन्दपूर्वक भगवान का कीर्तन करना परम सुखकारी है जब तक गुरुजनों की कृपा से भगवान भक्त पर अनुग्रह नहीं करते । इसी प्रभाव को ध्यान में रखते हुए वल्लभाचार्य जी ने नित्य व नैमित्तिक सेवा में कीर्तन को प्रमुख स्थान दिया और श्री नाथ जी की सेवा प्रारम्भ करते हुए कुम्भनन्ददास, सूरदास, कृष्णदास तथा परमानंद दास को कीर्तनियाँ नियुक्त किया ।

पुष्टि माधुर्यः कृष्णदास स्मृति ग्रन्थ – (पुष्टि सम्प्रदाय में कीर्तन प्रणाली – ८८)
लेखक : राकेश बाला सक्सेना

५८. पुष्टि माधुर्य : कृष्णदास स्मृति ग्रंथ (पुष्टि मार्ग की संगीत परम्परा – ९७)
लेखक : गोस्वामी द्वारकेशलाल जी.

५९. पुष्टि माधुर्य : कृष्णदास स्मृति ग्रंथ (अष्टछाप की गायिकी का वर्तमान स्वरूप – ७३),
लेखक : विश्वनाथ शुक्ल

६०. 'कलेर्दोषनिधे राजन्नस्ति होके महान् गुणः।
कीर्तनादेव कृष्णस्य मुक्तसङ्गः परं ब्रजेत्।।'
+ श्रीमद् भागवत महापुराण (१२/३/५१)

६१. हीरक जयन्ती ग्रंथ – (अष्टछाप संगीत एवं उसके वाधयंत्र – २०६)
लेखक : विष्णुचन्द्र पाठक

६२. अष्टछाप और वल्लभ सम्प्रदाय – (II) – ५६४, लेखक : डॉ. दीन दयालु गुप्त

६३. पुष्टि माधुर्य : कृष्णदास स्मृति ग्रंथ
(अष्टछाप की गायिकी का वर्तमान स्वरूप – ७४), लेखक : विश्वनाथ शुक्ल

६४. हीरक जयन्ती ग्रंथ– (अष्टछाप संगीत एवं उसके वाधयंत्र – २०६)
लेखक : विष्णुचन्द्र पाठक

६५. अष्टछाप और वल्लभ सम्प्रदाय – (II) – ५६२
लेखक : डॉ. दीन दयालु गुप्त

६६. अष्टछापीय भक्ति संगीत : उदभव और विकास – १०
लेखक : चम्पकलाल छबीलदास नायक

६७. अष्टछापीय भक्ति संगीत : उदभव और विकास – १५
लेखक : चम्पकलाल छबीलदास नायक

६८. अष्टछापीय भक्ति संगीत : उदभव और विकास – १०
लेखक : चम्पकलाल छबीलदास नायक

६९. श्रीमद् भागवत महा पुराण, (११/१४/२८)

७०. श्रीमद् भागवत महापुराण, भागवत महात्म्य (६/८५–८७)

७१. अष्टछाप कवियों का विस्तृत विवरण आगे के अध्यायों में दिया जाएगा।

७२. अष्टछाप और वल्लभ सम्प्रदाय – (।।) – ५६८
लेखक : डॉ. दीन दयालु गुप्त

७३. अष्टछाप और वल्लभ सम्प्रदाय–(।।) – ५६८
लेखक : दीन दयालु गुप्ता

७४. श्रीमद् वल्लभाचार्य : व्यक्तित्व, सिद्धांत और संदेश – (।।)
(पुष्टिमार्गीय कीर्तन प्रणाली – १४५)
लेखक : श्री कृष्णदास झालानी

७५. पुष्टि माधुर्य : कृष्णदास स्मृति ग्रन्थ
(पुष्टि सम्प्रदाय में कीर्तन प्रणाली – ८९) लेखक : राकेश बाल सक्सेना

७६. + अष्टछाप – परिचय – ३६२,
लेखक : प्रभु दयाल मीतल
+ हिन्दी के कृष्ण भक्ति कालीन साहित्य में संगीत – १२७
लेखिका : उषा गुप्ता

७७. अष्टछाप परिचय – ३६४
लेखक : प्रभु दयाल मीतल

७८. हिन्दी के कृष्ण भक्तिकालीन साहित्य में संगीत – १२६
लेखिका : उषा गुप्ता

७९. + अष्टछाप परिचय – ३६३,
लेखक : प्रभु दयाल मीत्तल
+ हिन्दी के कृष्ण भक्ति कालीन साहित्य में संगीत – १२७
लेखिका : उषा गुप्ता

८०. हिन्दी के कृष्ण भक्ति कालीन साहित्य में संगीत – १९१
लेखिका : उषा गुप्ता

८१. हिन्दी के कृष्ण भक्ति कालीन साहित्य में संगीत – १९१
लेखिका : उषा गुप्ता

८२. हिन्दी के कृष्ण भक्ति कालीन साहित्य में संगीत – १९०
लेखिका : उषा गुप्ता

८३. ८४, हिन्दी के कृष्ण भक्ति कालीन साहित्य में संगीत – १९५
लेखिका : उषा गुप्ता

८५. हिन्दी के कृष्ण भक्ति कालीन साहित्य में संगीत – १७७
लेखिका : उषा गुप्ता

८६. हिन्दी के कृष्ण भक्ति कालीन साहित्य में संगीत – १९३
लेखिका : उषा गुप्ता

८७. अष्टछापीय भक्ति संगीत : उदभव और विकास – (।।) – ९
लेखक : चम्पकलाल छबीलदास नायक

८८. अष्टछापीय भक्ति संगीत : उदभव और विकास – (।।) – १२१
लेखक : चम्पकलाल छबीलदास नायक

८९. हिन्दी के कृष्ण भक्ति कालीन साहित्य में संगीत – २१५
लेखिका : उषा गुप्ता

९०. हीरक जयन्ती ग्रन्थ – (अष्टछाप संगीत एवं उसके वाद्ययंत्र–२०८)
लेखक : विष्णुचन्द्र पाठक
+ अष्टछापिय भक्ति संगीत– : उदभव और विकास–(।।)– ९
लेखक : चम्पकलाल छबीलदास नायक

९१, ९२, ९३, हीरक जयन्ती ग्रंथ
(अष्टछाप संगीत एवं उसके वाद्य यंत्र–२०७)
लेखक : विष्णुचन्द्र पाठक

९४. + अष्टछापीय भक्ति संगीत : उदभव और विकास– ११७
लेखक : चम्पकलाल छबीलदास नायक
+ हीरक जयन्ती ग्रन्थ – (अष्टछाप संगीत एवं उसके वाद्य यंत्र–२०७)
लेखक : विष्णुचन्द्र पाठक

९५. + हिरक जयन्ती ग्रन्थ – (अष्टछाप संगीत एवं उसके वाद्य यंत्र–२०७)
लेखक : विष्णुचन्द्र पाठक
+ पुष्टि माधुर्य : कृष्णदास स्मृति ग्रंथ
(पुष्टि सम्प्रदाय में कीर्तन प्रणाली – ८९)
लेखक : राकेशबाल सक्सेना

९६. अष्टछाप – परिचय – ३४९, ३५० लेखक : प्रभुदयाल मीत्तल

९७. पुष्टि माधुर्य : कृष्णदास स्मृति ग्रंथ (अष्टछाप की गान–वाद्य परम्परा– ८२)
लेखक : प्रभु दयाल मीत्तल

९८. पुष्टि माधुर्य : कृष्णदास स्मृति ग्रथ– (पुष्टि सम्प्रदाय में कीर्तन प्रणाली– ८८,८९)
लेखक : राकेशबाल सक्सेना

९९. पुष्टि माधुर्य : कृष्णदास स्मृति ग्रंथ
(अष्टछाप की गायिकी का वर्तमान स्वरूप – ७६)
लेखक : विश्वनाथ शुक्ल

१००. अष्टछाप – परिचय – ३५४, लेखक : प्रभुदयाल मीत्तल

१०१. अष्टछापीय भक्ति संगीत : उदभव और विकास– (।।) – ३८
लेखक : चम्पकलाल छबीलदास नायक

१०२. अष्टछापीय भक्ति संगीत : उदभव और विकास– (।) – २०७
लेखक : चम्पकलाल छबीलदास नायक

१०३. पुष्टि पाथेय
(पुष्टि मार्ग की संगीत परम्परा – २२४)
लेखक : गोस्वामी द्वारकेशलाल जी

१०४. हीरक जयन्ती ग्रंथ (शास्त्रीय हवेली संगीत का क्रमिक विकास – ५२०)
लेखक : गंगाधर शास्त्री

१०५. इन भक्तों का विस्तृत वर्णन ८४ और २५२ वैष्णवन की वार्ता में मिलता है।

१०६. अष्टछाप और वल्लभ सम्प्रदाय : (।।) – ४२८
लेखक : डॉ. दीन दयालु गुप्ता

१०७. हीरक जयन्ती ग्रंथ (अष्टछाप संगीत एवं उसके वाद्य यंत्र – २०८)
लेखक : विष्णुचन्द्र पाठक

१०८. पुष्टि मार्धुय : कृष्णदास स्मृति ग्रंथ (पुष्टिमार्ग कृष्ण भक्ति काव्य की प्रेरणा भूमि – १५३)
लेखक : राजेन्द्र रंजन

१०९. पुष्टि मार्धुय : कृष्णदास स्मृति ग्रंथ (अष्टछाप की गान–वाद्य परंपरा – ७९)
लेखक : प्रभु दयाल मीतल

११०. पुष्टिमार्गीय कीर्तन संग्रह की पुस्तकें मुझे श्री गुसाँई जी बैठक जी, खम्भात
से एक सहृदय वैष्णव की सहायता से देखने को मिली थी।

१११. पोद्दार अभिनंदन ग्रंथ,
(वल्लभ सम्प्रदाय के ब्रजभाषा साहित्य की खोज–३६२)
लेखक : प्रभु दयाल मीत्तल

******